चन्दामामा
दिसम्बर १९६३
60 nP

यह है टिनोपाल का
नया पैक
जिसे केवल
आप ही खोल
सकते हैं!
Tinopal
हर स्थान पर अब
टिनोपाल रंगबिरंगे बहुत ही आकर्षक
नये पैक मे मिलता है।
पिल्फरप्रूफ़ सील
यह नया एल्युमीनियम पैक
विशेष प्रकार से सील बन्द किया
गया है जिसे केवल आप ही
खोल सकते हैं।
थोड़ासा टिनोपाल सफ़ेद
कपड़ों को अत्यधिक
सफ़ेद बनाता है।
टिनोपाल जे. आर. गायगी, एस. ए. बाल
स्विटजरलैंड का रजिस्टर्ड ट्रेड मार्क है।
भारत में बनानेवाले : सुहृद गायगी लिमिटेड, बड़ी बाड़ी, बड़ौदा
बिक्री कार्यालय:एक्सप्रेस बिल्डिंग, चर्चगेट, बम्बई १–बी. आर.
Shilpi SGT 3B HIN

जीवन यात्रा के पथ पर शक्ति की आवश्यकता है।

इनको लाल-शर पिलाइये
(डाबर बालामृत)

डाबर (डा० एस० के० बर्म्मन) प्राइवेट लि० कलकत्ता-२६

चन्दामामा

दिसम्बर १९६३

केवल विक्स वेपोरब ही
सर्दी-ज़ुकाम से जकड़े तीनों भागों पर तुरंत असर करता है...

सर्दी - ज़ुकाम को रातोंरात दूर करता है !
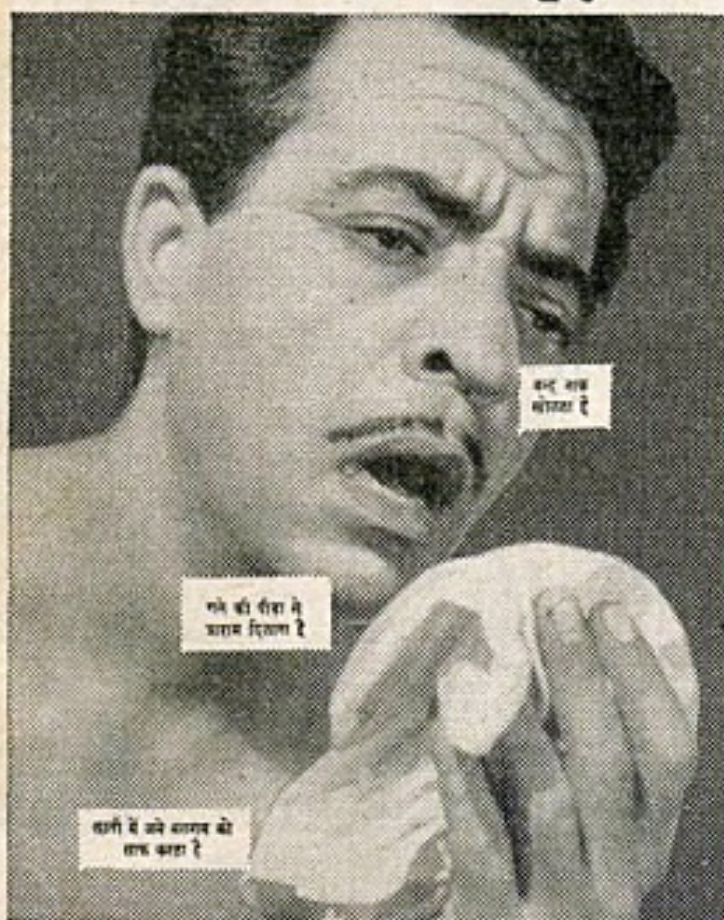
विक्स वेपोरब सारी रात दो तरीकों से आपकी नाक, गले तथा छाती में असर करता है—आपकी सर्दी से हुई परेशानियों को नष्ट करता है। आप आसानी से सांस लेने लगते हैं और चैन की नींद सोते हैं।

सर्दी के लक्षण (जैसे नाक का बहना, गले की खराश, खांसी, छाती में जकड़न) दिखायी पड़ते ही तुरंत विक्स वेपोरब इस्तेमाल कीजिये। केवल विक्स वेपोरब ही सर्दी-ज़ुकाम से जकड़े सभी तीनों भागों—नाक, गले तथा छाती में तुरंत असर करता है और आपको सर्दी-ज़ुकाम के सभी कष्टों से रातोंरात आराम दिलाता है। सोते समय विक्स वेपोरब नाक, गले, छाती तथा पीठ पर मलिये। तुरंत ही आप विक्स वेपोरब की गरमाहट महसूस करने लगते हैं। साथ ही साथ आपके शरीर की सामान्य गरमी से वेपोरब शीघ्र ही औषधियुक्त भाप में बदल जाता है। यह भाप सारी रात आपके हर श्वास के साथ भीतर जाती रहती है। जबकि आप चैन की नींद सोते हैं यह आश्चर्यजनक द्विविधि क्रिया जहां सर्दी की तकलीफ सबसे ज़्यादा है वहां आपकी नाक, गले तथा छाती में गहराई तक होती रहती है। सुबह तक आपका सर्दी-ज़ुकाम जाता रहता है और आप फिर से खुश और स्वस्थ हो जाते हैं।

विक्स वेपोरब

परिवार के हर व्यक्ति के लिए —
सर्दी-ज़ुकाम को रातोंरात दूर करता है

देना बैंक

अल्पवयस्क बचत योजना

- १० वर्ष और अधिक उम्र के बालक खाते खोल सकते हैं
- ५ रुपये से खाते खोल सकते हैं
- ब्याज ३%
- आकर्षक सेविंग्ज़ बॉक्स मुफ़्त दिया जाता है

अधिक जानकारी अपने निकटतम देना बैंक ऑफ़िस से प्राप्त कीजिए

११० से अधिक ऑफ़िस और ३४ सेफ डिपोज़िट वॉल्ट

प्रवीणचंद्र व. गांधी मॅनेजिंग डायरेक्टर

देवकरण नानजी बेंकिंग कं. लिमिटेड रजिस्टर्ड ऑफ़िस :- देवकरण नानजी बिल्डिंग्स, १७, हॉर्निमेन सर्कल, फोर्ट, बम्बई १.

DB/SH 154

चन्दामामा

संचालक: चक्रपाणी

कई पाठक यदा कदा लिखते रहते हैं कि "चन्दामामा" में विज्ञान सम्बन्धी सामग्री नहीं दी जाती, बच्चों को विज्ञान में उत्सुकता और अभिरुचि होती है।

"चन्दामामा" की चौखट में, जिस प्रकार की विज्ञान सम्बन्धी सामग्री दी जा सकती है, हम प्राय: देते आये हैं। अब भी दे रहें हैं।

विज्ञान सम्बन्धी बातें पाठ्य पुस्तकों में होती ही है। अच्छा है जो पाठक, विज्ञान में अधिक और विस्तृत अभिरुचि रखते हों, वे अपनी पाठ्य पुस्तकें और ध्यान से पढ़ें। हम भी अपनी ओर से कभी कभी यह सामग्री देते ही रहेंगे।

वर्ष: १५ दिसम्बर १९६३ अंक: ४
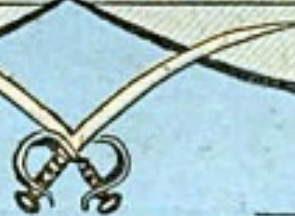
भारत का इतिहास

घियासुद्दीन के मरने के तीन दिन बाद राजकुमार जूना मोहम्मद बिन तुगलक ने अपने को सुल्तान घोषित किया। चालीस दिन बाद वह दिल्ली आया। उसने बड़े वैभव के साथ अपना राज्याभिषेक किया। लोगों में उसने चान्दी और सोना बँटवाया। कर्मचारियों को खिताब दिये।

यह बड़ा विचित्र आदमी था। यह बड़ा बुद्धिमान था अथवा पागल, खूंखार अथवा साधु था, कहना कठिन है। यह सच है कि उसको कई शास्त्रों में असाधारण पान्डित्य था। अच्छा योद्धा भी था। वह ज्यादह बार जीता और कम बार हारा।

रोजमर्रे के जीवन में भी उसमें तत्कालीन व्यसन न थे। उसने बहुत-से दान-धर्म किये। पर जितना उसको पुस्तक ज्ञान था, उतना व्यावहारिक ज्ञान न था। उसकी योजनाएँ, योजनाओं के रूप में बहुत अच्छी थीं, पर जब वे कार्यान्वित की जातीं तो उपद्रव-सा मच जाता। यही नहीं वह बड़ा गुसैल था, जल्दबाज़ था। उसको यह गँवारा न था कि उसकी बात का कोई विरोध करे। जब उसकी योजनाएँ असफल होने लगीं, तो वह और भी विक्षिप्त-सा हो उठा। उसने जनता का उपकार करना चाहा, पर जब उनका उपकार नहीं हुआ, उनको कृतघ्न समझकर वह उन पर अत्याचार करने लगा।

गंगा और यमुना के दो-आब में उसने कर बढ़ाये। वह उपजाऊ जगह थी, पर ये कर तब लगाये गये, जब वहाँ अकाल पड़ा हुआ था। कर्मचारियों ने क्रूरता से वे कर वसूले भी। किसान खेत छोड़कर

भाग गये। उनको वापिस बुलाने के लिए सुल्तान ने बड़ी बड़ी सज़ायें दीं।

१३२७ में तुगलक ने अपनी राजधानी दिल्ली से दौलताबाद (देवगिरि) सदुद्देश्य से ही बदली थी। जिसके राज्य में, गंगा जमुना का दोआब, लाहौर, गुजरात, बेन्गाल, दक्षिण भारत थे, दिल्ली की अपेक्षा दौलताबाद अधिक केन्द्रीय था। यही नहीं दिल्ली की तरह मंगोल उसपर आक्रमण नहीं कर सकते थे।

राजधानी बनाने के लिए तुगलक ने दौलताबाद में बड़ी बड़ी इमारतें बनवाईं। बड़ी सड़क बनवाई, उसके दोनों ओर पेड़ लगवाये। दिल्ली और दौलताबाद के बीच में डाक की व्यवस्था की। जो दौलताबाद जाना चाहते थे, उनको खूब धन दिया। यह सब ठीक ही था।

पर जब सुल्तान को मालूम हुआ कि कुछ दिल्लीवाले अपने घर छोड़कर जाने को तैयार न थे, तो उसको गुस्सा आ गया। उसने आज्ञा दी कि दिल्लीवाले अपना समान असबाब लेकर दौलताबाद जायें। इस सफ़र में कितनी मुसीबतें उन्हें झेलनी पड़ीं भले ही हम न मानें, पर इतना तो

मानना पड़ेगा कि ७०० मील का सफ़र बहुत मुश्किल है। रास्ते में बहुत से गुज़र गये और कई दौलताबाद पहुँचकर मर गये।

तब तक सुल्तान ने भी अपनी गल्ती देखी, उसने आज्ञा दी कि राजधानी फिर वापिस दिल्ली ले जाया जाये। जो जीवित दिल्ली पहुँच सके, उनकी संख्या बहुत कम थी। दिल्ली ऐसी लगती थी, जैसे उजड़ गई हो। दिल्ली में रौनक आने के लिए फिर बहुत समय लगा।

१३२९-१३३० में सुल्तान ने ताम्बे के सिक्के चलाये। यह एक क्रान्तिकारी

परिवर्तन था, पर ये सरकारी टक्सालों में ही न बनकर, घर घर में बनाये जाने लगे। इसलिए देश में आर्थिक दुस्थिति पैदा हो गई। "प्रति हिन्दु का घर एक टक्साल बन गया। ये सिक्के लाखों और करोड़ों के संख्या में बनने लगे। ग्रामाधिकारी, भूस्वामी बहुत धनी हो गये। हर सुनार ने ये सिक्के बनाये और खज़ाना भर गया।" उस समय के ऐतिहासिकों ने यह लिखा है।

जब तुगलकने यह हालत देखी तो उसने ताम्बे के सिक्कों को चान्दी और सोने के सिक्कों से खरीदना चाहा। उसके इकट्ठे किये हुए ये सिक्के इतने थे कि सौ साल बाद भी तुगलकाबाद में उनके ढ़ेर के ढ़ेर दिखाई दिये।

१३२८-२९ में ट्रान्स अक्सियाना से चघताइयों के सरदार, तर्माशिरीन खान ने भारत पर हमला किया। यह आक्रमण जिस प्रकार शुरु हुआ था, उसी तरह समाप्त हो गया। यह स्पष्ट नहीं मालूम कि तुगलक ने शत्रुओं को हराया था या उनको घूँस देकर भेज दिया था।

भारत और चीन के बीच के पर्वत करजल को वश में करने के लिए १३३७-३८ में तुगलक ने एक बड़ी सेना भेजी। प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण, वर्षा के कारण अथवा रसद आदि न होने के कारण सेना को उल्टे पाँव आने पड़ा। कुछ ऐतिहासिकों का कहना है कि वापिस आनेवाले दस ही थे और कुछ का कहना है कि तीन ही थे। पर आक्रमण का उद्देश्य सफल रहा। उस प्रदेश के लोगों ने दिल्ली की सल्तनत स्वीकार कर ली और दिल्ली को कर देने लगे।

महाभारत

गान्धारी धृतराष्ट्र आदि के वनवास पर चले जाने से मानों हस्तिनापुर की रौनक ही जाती रही। पाण्डव राज्य, वेद पठन आदि छोड़कर हमेशा दुःख में रहते। विशेष रूप से अपनी माँ कुन्ती को याद करके वे सूखने-से लगे।

नगर के लोग भी जैसे और कुछ बातें करने को न हों, हमेशा बूढ़े राजा और उसके पुत्रशोक के बारे में, कुन्ती और गान्धारी के बारे में, विदुर और संजय के बारे में बातें करते रहते। उनको भी कोई सुख सन्तोष न था।

बड़ों के चले जाने के बाद पाण्डवों के आगे पीछे शून्य-सा हो गया। अभिमन्यु और उपपाण्डव युद्ध में मारे गये थे। उनको याद करके दुःख होता था और जो उनके पहिले थे वे वनवास के लिए चले गये थे। वे जीवित थे या मृत, यह भी न मालूम था। उनको याद करके भी दुःख होता था। इस दुःख में आनन्द देने के लिए केवल परीक्षित रह गया था। उनकी कुछ दयनीय स्थिति थी।

आखिर जो सबके मन में था उसको सहदेव ने व्यक्त किया। उसने युधिष्ठिर से कहा—"भाई, मैं जानता हूँ कि तुम वन में जाकर अपने लोगों को देखना चाहते हो। मैं भी माँ को देखने की इच्छा को व्यक्त करने में झिझकता रहा। न मालूम वह कहाँ है और क्या क्या कष्ट झेल रही है।"

तुरत द्रौपदी ने कहा—"क्या मैं सास को फिर जीता जी देख पाऊँगी?

में ही नहीं सब स्त्रियाँ गान्धारी, धृतराष्ट्र, कुन्ती को देखने के लिए उतावली हो रही हैं। वे यात्रा के लिए उद्यत हैं। हमें जाने की अनुमति दीजिये।"

युधिष्ठिर ने तुरत यात्रा की आज्ञा दे दी। यह घोषणा कर दी गई कि जो कोई धृतराष्ट्र को देखना चाहे वह उनके साथ आ जायें। कल ही यात्रा शुरु होगी।

यह घोषणा सुन स्त्री और वृद्ध भी निकले। ताकि और भी इकट्ठे हो जायें वे पाँच दिन नगर से बाहर रहे। फिर सब ने वन के लिए कूच किया। उनके साथ सेना भी चली। कृपाचार्य उसका नेतृत्व कर रहा था।

लोग रथों में, हाथियों पर, घोड़ों पर, ऊंठों पर, पैदल जा रहे थे। द्रौपदी आदि स्त्रियाँ पालकियों में सवार होकर रास्ते में दान करती जा रही थीं। सब जब जा रहे थे तो युयुत्सु और धौम्य नगर की रक्षा के लिए पीछे रह गये।

सब कुरुक्षेत्र पहुँचे। शतभूप, धृतराष्ट्र आदि जिस वन में रह रहे थे, वह पास ही था कि सब रथों से, वाहनों से उतर पड़े। सब पैदल चलने लगे। स्त्रियाँ भी उनके साथ थीं।

आश्रम केले के पेड़ों के बीच में था। वहाँ कोई न था। सर्वत्र शान्ति थी। यह मालूम होने पर कि पाण्डव आये थे, पास के तपस्वी आये। उन्होंने बताया कि धृतराष्ट्र यमुना नदी में स्नान करने गये हुए थे।

जब पाण्डव उनके बताये हुए मार्ग पर गये तो उनको थोड़ी दूरी पर धृतराष्ट्र दिखाई दिये। सहदेव सब से पहिले भागा भागा गया। कुन्ती के

पास जाकर उसके पाँव पकड़कर जोर से रोने लगा।

कुन्ती ने भी आँसू बहाते हुए सहदेव को उठाया। उसका आलिंगन करके गान्धारी से कहा—"सहदेव आया है।" फिर उसे बाकी पाण्डव भी आते दिखाई दिये।

कुन्ती पहिले गई। गान्धारी और धृतराष्ट्र को रास्ता दिखाती अपने लड़कों के पास गई। पाण्डवों ने बड़ों के हाथ से जलपात्र ले लिये। उनके साथ चले आये। वे सब मिलकर उस जगह गये, जहाँ नागरिक और स्त्रियाँ बैठी थीं।

युधिष्ठिर ने उन सबका सविवरण परिचय किया। उन सब को अपने चारों ओर पाकर धृतराष्ट्र को ऐसा लगा जैसे वह फिर हस्तिनापुर आ गया हो।

स्त्रियों ने गान्धारी और कुन्ती को नमस्कार किया। फिर सब ने आश्रम में प्रवेश किया।

आस पास से आये हुए तपस्वियों के कहने पर संजय ने पंच पाण्डव, उनकी पत्नियाँ, उत्तरा और धृतराष्ट्र की बहुओं का उनसे परिचय करवाया।

फिर कुशल प्रश्न पूछे गये। धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर से राज्य के बारे में पूछा। उनका उत्तर देकर युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र से बनवास के बारे में पूछा। सब जानने के बाद उसने पूछा—"विदुर कहाँ है, दिखाई नहीं देता।"

"बेटा, विदुर बड़ी कठिन तपस्या करता सूखकर कहीं कहीं फिर रहा है। ब्राह्मणों ने बताया है कि वह कभी इस वन में दिखाई देता है।" धृतराष्ट्र ने जवाब दिया। वह यह कह ही रहा था

कि दूरी पर उनको विदुर दिखाई दिया। उसके शरीर पर धूल जमी हुई थी।

तुरत युधिष्ठिर विदुर के पास गया। विदुर घने जंगल में चला गया, कभी दिखाई पड़ता तो कभी न दिखाई देता। "विदुर, मैं युधिष्ठिर हूँ, तुम्हारे दर्शन के लिए आ रहा हूँ।" चिल्लाता युधिष्ठिर उसके पीछे पीछे चला।

आखिर युधिष्ठिर को विदुर एक निर्जन प्रदेश में खड़ा दिखाई दिया। उसको पहिचानना कठिन था। युधिष्ठिर ने कहा—"महात्मा! मैं युधिष्ठिर हूँ।" वह विदुर के सामने खड़ा हो गया। तब एक अद्भुत बात हुई। विदुर बिना पलक झपके युधिष्ठिर की ओर देखने लगा। दोनों की नज़रें मिलीं। फिर युधिष्ठिर को ऐसा लगा जैसे विदुर के प्राण उसके प्राणों में, विदुर का शरीर उसके शरीर में एकसात् हो गया हो।

जब युधिष्ठिर ने कुछ देर बाद चारों ओर देखा तो विदुर का शरीर एक पेड़ से सटा पड़ा था। उसकी आँखें मुँदी थीं। वह कलेवर मात्र था।

उसे व्यास की बात याद हो आयी। व्यास ने कहा था कि विदुर उसमें जा मिलेगा। जब वह विदुर के शरीर का दहन संस्कार करने जा रहा था, तो आकाशवाणी हुई "युधिष्ठिर इनके शरीर का दहन संस्कार न करो। उस के लिए जिसने शरीर छोड़ दिया है, दुःख मत करो।"

तुरत युधिष्ठिर ने वह कलेवर वहीं छोड़ दिया। आश्रम में आकर, उसने वह सब बताया, जो कुछ गुज़रा था। धृतराष्ट्र बड़ा खुश हुआ। अतिथि वह सारा दिन, सारी रात, धृतराष्ट्र के दिये हुए कन्द मूल, फलों को खाकर पेड़ों के नीचे सो गये।

[२९]

[केशव और उसके साथियों को पकड़ने की चाल चल गई। ब्रह्मदण्डी और गरुड़ के मुखवाले सरदार के लोगों ने केशव और उसके साथियों को घेर लिया। ब्रह्मदण्डी चिल्लाया, सिवाय केशव के, बाकी दोनों को मार दो। बाद में—]

ब्रह्मदण्डी की आवाज़ सुनते ही केशव ने उस तरफ़ सिर फेरा, जिस तरफ़ से वह आवाज़ आयी थी। सामने के पंखवाले मनुष्यों को एक तरफ़ हटाता, मान्त्रिक सामने आया। उनके दोनों ओर जित और शक्ति तलवार लिए खड़े थे। ब्रह्मदण्डी को देखते ही केशव आँखें लाल किये, उसकी ओर लपक ही रहा था कि इतने में चार-पाँच पंखवाले मनुष्य उस पर कूदे और उसके हथियार ले लिये। उसके बाद जयमल्ल और जंगली गोमान्ग के भी हथियार ले लिये।

असहाय, निहत्थे उन तीनों को खड़ा पा, जित और शक्तिवर्मा ज़ोर से हँसे, तलवारों को उठाकर कहा—“अच्छा हुआ कि हमने कुछ देर पहिले ही तलवारों को

तेज़ कर लिया था। एक ही चोट से सिर और धड़ को अलग कर सकता हूँ।"

इतने में स्थूलकाय ने अपना चाबुक उठाया। ज़ोर से चिल्लाया, उनकी तलवारों को चाबुक से लपेटा। "जित और शक्ति, तुम उसको नहीं मार सकते। वे कभी मेरे गुलाम थे। साठ सोने के सिक्के उनके दाम हैं। पहिले वह पैसा मुझे दो, फिर चाहो, तो उनको मार दो।"

स्थूलकाय की बातें सुनकर, जितवर्मा ने घायल साँप की तरह फुंकारते हुए कहा—"अबे, ओ माँस के लोथड़े, पहिले तुम हाथ से चाबुक हटाओ। वे अब तेरे गुलाम नहीं हैं। तुमने कभी ही उन्हें बेच दिया था। वे व्यापारी मर भी गये हैं, जिन्होंने इन्हें खरीदा था।"

"चूँकि वे व्यापारी मर गये हैं, इसलिए ही मेरी वस्तु मेरे पास वापिस आ गई है। क्या तुम इतना भी नहीं जानते? अरे, असभ्य कहीं के!" स्थूलकाय ने कहा।

जित और शक्ति उबल पड़े। तलवार छोड़ वे स्थूलकाय से भिड़ पड़े। स्थूलकाय ने उनको इस तरह रगड़ा, जिस तरह कि बिल्ली चूहों को रगड़ती है।

वह ब्रह्मदण्डी मान्त्रिक, जो तब तक तमाशा देखता-सा लगता था, छी कहता, अपना जादू का डण्डा उठाकर, गरुड़ के मुखवाले सरदार की ओर मुड़कर कहने लगा—"गरुड़ेश! अब देखने से काम नहीं चलेगा। ये तीनों या तो कुत्तों की मौत मारे जायेंगे और या केशव आदि को जाने का मौका दे देंगे। पहिले इन कुत्तों को हटाओ।"

गरुड़ेश ने अपने हाथ के भाले को लड़ते हुए लोगों की ओर निशाना करके

ज़ोर से कहा—"जित और शक्ति, तुम उस मोट्टू को छोड़ दो। ये तीनों जो मिले हैं, वे मेरे हैं। मैंने उनको पकड़ा है। समझे।"

उस सरदार की बात सुनकर शक्ति और जितवर्मा मोट्टू के हाथ से छूट गये, नीचे पड़ी तलवारों को लेकर दान्त पीसते खड़े हो गये।

स्थूलकाय ने हाँफते हुए अपना चाबुक उठाया और उसे कन्धे पर डाल, ब्रह्मदण्डी की ओर घूरने लगा।

ब्रह्मदण्डी केशव के पास आया। उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा—"केशव, मैं तुम्हारा हितैषी हूँ। गुरुद्रोही जयमल्ल की बातें सुनकर, कितना अनर्थ हो गया है, यह सब सोचकर मेरी आत्मा कराह उठती है। मैंने तुम्हें करोड़पति ही नहीं, लोकेश्वर बनाने की सोची थी। यह मेरी इच्छा ही नहीं, उस कालभैरव की आज्ञा है। ब्रह्मा ने ही फिर तुम्हें मेरे हाथों में दिया है। हम दोनों का एक होना, वायु और अग्नि का एक होना है। हमारा कोई जवाब नहीं है। क्या कहते हो?"
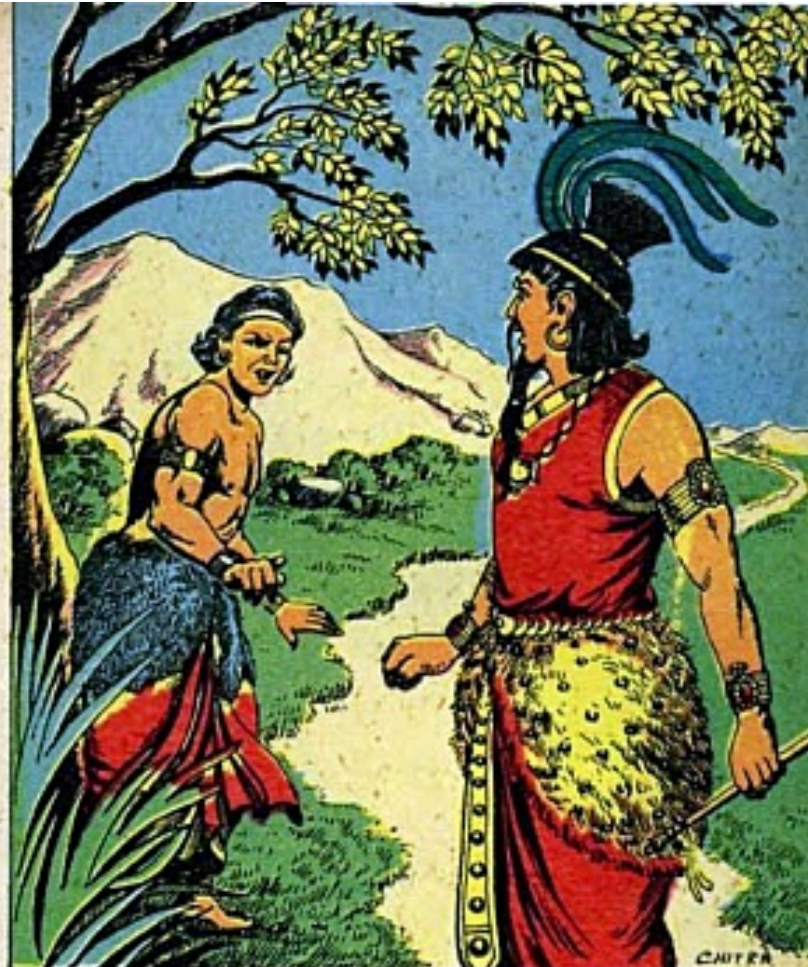
ब्रह्मदण्डी की बातें सुनकर केशव उबल पड़ा। उसने अपने कन्धे पर से मान्त्रिक का हाथ ज़ोर से हटाया। "ब्रह्मदण्डी, यह न सोचो कि मैं तुम्हारी चिकनी चुपड़ी बातों में आ जाऊँगा। तुम कितने बड़े मान्त्रिक हो, यह मैं जानता हूँ।"

ब्रह्मदण्डी ने अपने गुस्से को रोकते हुए कहा—"केशव बस, एक बार तो मैंने ये अपमान-भरे वाक्य सुन लिये। फिर कभी तुमने मेरी मन्त्रशक्ति का परिहास किया, तो तुम्हें खड़ा-खड़ा राख कर दूँगा। उस राख को शरीर पर लगाकर, मगरों की

उस झील में नहाकर, कालभैरव के पास चला जाऊँगा। इस जयमल्ल को, सिवाय चितकबरे गधे होने के मन्त्र से और अधिक क्या आता है?" जयमल्ल की ओर मुड़कर उसने कहा—"इस द्रोही को, इस दुष्ट को बाणों और भालों से टुकड़े-टुकड़े करके गिद्धों को खिला दो।"

ब्रह्मदण्डी अपनी बात अभी पूरी भी न करने पाया था कि जित और शक्तिवर्मा जयमल्ल और जंगली गोमान्ग को तलवार मारने ही वाले थे कि गरुड़ के मुखवाले सरदार ने उनकी तलवारों को गिराते हुए कहा—"ठहरो, ठहरो....यह सुनते ही कि "गिद्धों को खिला दो।" मुझे एक बात सूझी है। इन दोनों की शक्ल सूरत देखकर, ये गिद्ध जाति के मानव मालूम होते हैं। हम गरुड़ जातिवालों की सेवा करते, हमारे शास्त्रों में लिखा है, इन गिद्ध जाति के लोगों को हमेशा जीवित रहना चाहिए। इसलिए ये दोनों मेरे सेवक हैं।"

फिर उसने अपने अनुचरों की ओर मुड़कर कहा—"इनको मेरे घर ले जाओ और इनको सुरक्षित रखो। मेरे पंख कहीं बिगड़ बिगाड़ न जायें, उनको झाड़कर धूप में रखने का काम इनको सिखाओ। अगर वे भाग गये, तो तुम्हारे प्राण निकलवा दूँगा।"

गरुड़ के मुखवाले सरदार के सेवक जब जयमल्ल और जंगली गोमान्ग को ले जाने लगे, तो ब्रह्मदण्डी ने उनको रोक कर, गरुड़ के मुखवाले सरदार से कहा—"गरुड़ेश! अब जल्दबाज़ी न कीजिये। आप इनके बारे में तनिक मात्र भी नहीं जानते। ये भाग जायेंगे, आप इस बात को सोचिये। अगर भागना भी चाहेंगे, तो

आपके प्राण लेकर ही भागेंगे। मेरी बात मानिये। इनकी बोटियाँ काट-काटकर, यहीं गिद्धों को खिला दीजिये।"

ब्रह्मदण्डी के यह कहते ही गरुड़ के मुखवाले सरदार ने नाक भौं चढ़ाते हुए कहा—"ब्रह्मदण्डी, तुम छोटी-छोटी बात पर इतने घबराते हो, तिल का ताड़ करते हो कि तुम्हें देखकर लगता है, जैसे तुम कौव्वे की जाति के हो। शास्त्रों में लिखा है कि कौव्वे की जातिवालों को गिद्ध जातिवालों की सेवा करनी चाहिए। इसलिए तुम्हें इन दोनों का सेवक नियुक्त करता हूँ।"

गरुड़ के मुखवाले की बात सुनकर, ब्रह्मदण्डी यों चकराया, जैसे पगला गया हो। इधर-उधर उछलते हुए जादू के डण्डे को फेरते हुए उसने कहा—"गरुड़ेश, तुमने कालभैरव के उपासक के बारे में क्या कहा? खैर, मैं अपने केशव को लेकर, भयंकर घाटी में चला जाऊँगा। जैसे मैंने आपको वचन दिया था, आपके देवताओं को बलि देने के लिए मैं अवश्य मनुष्यों को भेज दूँगा। कल सवेरे ही हम निकल पड़ेंगे।"

"मुझे इस पर कोई आपत्ति नहीं है। अब निकलो।" कहता कहता गरुड़ के मुखवाला निकला। उसके साथ और सब भी निकले। केशव, जयमल्ल और जंगली गोमान्ग के आगे पीछे दस-दस पंखवाले मनुष्य चले।

ब्रह्मदण्डी ने स्थूलकाय को कुछ ईशारा किया। झुण्ड में से अलग ले जाकर, कान में कहा—"वीर चूड़ामणि, मेरी बात सुनो। अब इस पक्षी के मुखवाले के पास रहना हम दोनों के लिए खतरनाक है। कल सवेरे जित

और शक्तिवर्मा, तुम और मैं, केशव को लेकर, भयंकर घाटी के लिए निकल पड़ेंगे। अगर हमने उस केशव को भागने न दिया, तो भयंकर घाटी की सब धन राशि हमारी है। यदि वह हमारे साथ न रहा, तो हमें वहाँ कानी कौड़ी भी न मिलेगी। समझे ?"

"इस छोटे लड़के के बारे में तुम्हारा इतना बढ़ा चढ़ाकर सोचना, मुझे अच्छा नहीं लगता। मेरी समझ में तो उसकी कीमत बीस सोने के सिक्के भी नहीं है।" स्थूलकाय ने ओंठ मींचकर कहा।

"वाह वाह, तुम भी क्या कह रहे हो, यह केशव क्या मामूली लड़का है। उसकी भुजा पर राजयोग लिखा है। यदि तुम उसकी भुजा पर फणवाले साँप की मुद्रा देखोगे, तो तुम इस तरह बात न करोगे। कालभैरव ने स्वयं वह मुद्रा बनाई है, जानते हो ?" कहते हुए ब्रह्मदण्डी कान पकड़ने लगा।

"जब तक वह ब्रह्मपुर का राजा नहीं हो जाता, तब तक जो तुम कह रहे हो, उस पर मुझे विश्वास नहीं होगा। चाहे कुछ भी हो, मुझे क्या ? जो वचन तुमने दिया है, वह न भूलना।" स्थूलकाय ने इधर उधर देखते हुए कहा।

"ब्रह्मदण्डी, स्थूलकाय की कनबतियाँ ही नहीं, उससे पहिले की बातें भी श्वानकर्णी द्वारा नियुक्त गुप्तचर पत्थरों के पीछे से सुन रहे थे। जब से केशव और उसके साथी गरुड़ के मुखवालों से पकड़ लिये गये थे, तब से सारी बातें वे अपने सरदार तक पहुँचा रहे थे।

केशव और उसके साथियों के गुफ़ा में घुसने पर अंगारे उगलनेवाला शेर भाग गया था। यह जब से बीड़ाली श्वानकर्णी

ने सुना, तो वे जान गये कि गुफ़ा में जाने में कोई खतरा न था। वह गुफ़ा में घुसा। उसने वह पत्थर की गदा देखी, जो जंगली गोमान्ग छोड़ गया था। फिर उनके पगचिन्हों को देखता, गुफ़ा के छेद में से जो कुछ बाहर हो रहा था, उसने देखा।

"इतने सारे लोगों को उनकी जगह हराना टेढ़ी खीर थी। इस बीच वे केशव और उसके साथियों को मार भी सकते थे।" बीड़ाली ने कहा।

श्वानकर्णी ने अपने मूलपुरुष पत्थर की गदा को अपनी आँखों को छुआकर कहा—"अब हमारे गिरोह की कहीं हार न होगी। तीनों मित्रों की रक्षा करना हमारी जिम्मेवारी है। फिर उनकी सहायता से पंखवाले मनुष्यों का उन्मूलन कर देंगे।"

"उनकी रक्षा का भार, मुझ पर भी काफ़ी है। पंखवाले मनुष्यों के देवता के लिए हम बलि बनाकर भेजे गये थे, इन तीनों ने तब हमारी मदद की थी। तुम क्या सोच रहे हो?" बीड़ाली ने पूछा।

बीड़ाली के यह प्रश्न करते ही श्वानकर्णी ने सिर हिलाते हुए, दूर खड़े अपने गिरोहवालों को पास बुलाकर कहा—"तुम अन्धेरा होते ही छेद में से बाहर जाना। वहाँ पड़े पंखवाले मनुष्यों के पंख उठा लेना। फिर यूँ दिखाते हुए जैसे पंखवाले मनुष्य हो, गरुड़ के मुखवाले सरदार के पास जाओ, केशव आदि किस हालत में हैं, यह जानकर आओ।"
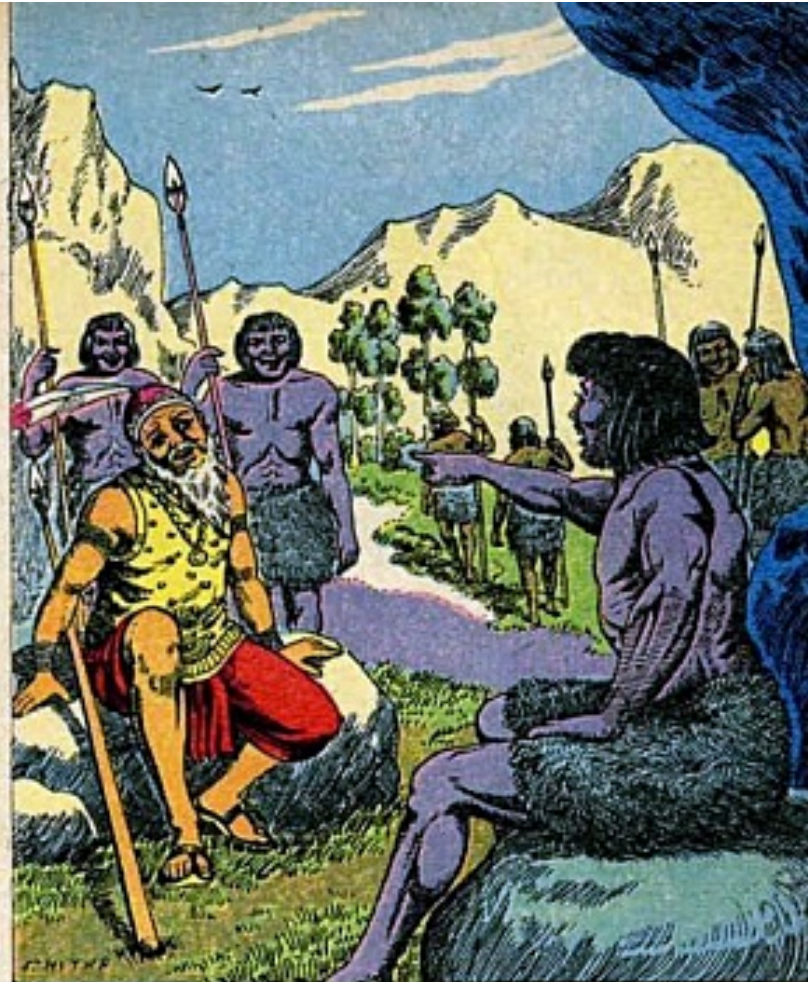
"तो यह चाल है तुम्हारी? अच्छी है। एक तुम अपने गिरोहवाले को, एक मेरे गिरोहवाले को, भेजो। यह ठीक रहेगा।" बीड़ाली ने कहा। श्वानकर्णी इसके लिए मान गया।

थोड़ी देर बाद सूर्यास्त हो गया। धीमे-धीमे अन्धेरा होने लगा। श्वानकर्णी और बीड़ाली गिरोह के दो लोग, सुरंग से बाहर रेंगते हुए गये। वहाँ उन्होंने जो पंख पाये, वे ले लिये, पंख दुपहर को पंखवाले मनुष्य लड़ते समय छोड़ गये थे।

रास्ते में किसी ने उन पर सन्देह नहीं किया। किसी ने उनको रोका-टोका नहीं। वे एक-एक तम्बू को पार करते, उस तम्बू के पास गये, जिसमें ब्रह्मदण्डी और स्थूलकाय थे। मशालों की रोशनी में उन्होंने उन दोनों को पहिचान लिया। उन्होंने अनुमान किया कि उन्ही के पास केशव और उसके साथी होंगे। जब उन्होंने चार कदम आगे रखे, तो उनका अनुमान ठीक निकला। एक तम्बू के सामने, जित और शक्ति तलवार लिये पहरा दे रहे थे। अन्दर केशव, जयमल्ल और जंगली गोमान्ग चटाई पर बैठे बातें कर रहे थे।

जंगली लोग एक साथ जित और शक्तिवर्मा के पास गये। "रास्ते से हटो। गरुड़ के मुखवाले सरदार की आज्ञा है कि इन तीनों दुष्टों को उनके पास ले जाया जाये।"

जित और शक्ति ने मशाल की रोशनी में, जंगली लोगों के चेहरे गौर से देखे। फिर उनको रास्ता दे दिया। इतने में जितवर्मा को कुछ सन्देह हुआ। "ये पंखवाले मनुष्यों की जाति के नहीं हैं। जंगली जातियों के से मालूम होते हैं।"

"हाँ हाँ, मुझे भी यही सन्देह हो रहा है।" कहकर शक्तिवर्मा ने तलवार निकाली। "होय....तुम कौन हो। ठहरो।" वह यों चिल्लाता आगे बढ़ा। [अभी है]

चन्दामामा का मन्दहास

[२]

बच्चे का नाम बद्रबसीम रखे जाने के बाद उसका मामा, गुलनार का भाई सालिहा उसको गोदी में लेकर, उसको चूमता, पुचकारता, बीच-बीच में उछालता, कमरे में इधर-उधर घूमने लगा। फिर वह यकायक खिड़की में कूदा और बच्चे के साथ समुद्र में अदृश्य हो गया।

बादशाह शरिमान ज़ोर से चिल्लाया। रो-रोकर उसने सिर पीटा। गुलनार ने उसके पास आकर उसको मनाया—"बच्चे के लिए आप बिलकुल न घबरायें। जब जन्म देनेवाली, मुझको ही भय नहीं है, तब आपको किस बात का डर है? मेरा भाई उस पर कोई आपत्ति न आने देगा। आप देखते रहिये, बच्चा भीगेगा तक नहीं। उसमें आपका रक्त अवश्य है, पर चूँकि मेरा रक्त है, वह पानी में भी जी सकता है। मेरा भाई जल्दी ही वापिस चला आयेगा।" बाकी समुद्र स्त्रियों ने भी यही कहा। तो भी जब तक सालिहा बच्चे के साथ वापिस न चला आया, उसका मन शान्त न हुआ। सालिहा समुद्र में से एक छलाँग में खिड़की में आ गया और फिर कमरे में आया। उसके हाथ में बच्चा हँस रहा था।

"जब मैं समुद्र में कूदा था, तो शायद आप घबरा गये थे।" उसने बादशाह से कहा।

"घबराहट? मैंने न सोचा था कि मैं फिर बच्चे को देख सकूँगा।" बादशाह ने कहा।

"अब इसे कोई भय नहीं है। जो कुछ मन्त्र वगैरह इसके लिए पढ़ने थे, वे पढ़ दिये हैं। यह ज़िन्दगी-भर, जितनी आसानी से भूमि पर रह सकेगा उतनी आसानी से जल में भी रह सकेगा। समुद्र मानवों को जो अधिकार प्राप्त हैं, वे इसे भी प्राप्त होंगे।" सालिहा ने कहा।

उसने बच्चे को, फिर उसकी माँ को दिया। तब एक थैला निकाला और उसमें जो कुछ था, वह कालीन पर उड़ेल दिया। उसमें बड़े-बड़े हीरे, बड़ी बड़ी मोतियाँ, पन्ने, कितने ही तरह के समुद्र रत्न थे। उनकी चमक से सारा कमरा चमकने लगा।

"खाली हाथ नहीं आना चाहता था, इसलिए जो मिले वह लेते आया। इस बार जब आऊँगा, तो अच्छे-अच्छे रत्न लाकर दूँगा।" सालिहा ने कहा।

बादशाह को न सूझा कि कैसे अपने साले को कृतज्ञता दिखाये। उसने अपनी पत्नी की ओर मुड़कर कहा—"तुम्हारे भाई के दिये हुए उपहारों से मेरा दिमाग चकरा गया है। इसमें एक-एक का मूल्य मेरे राज्य के मूल्य जितना होगा।"
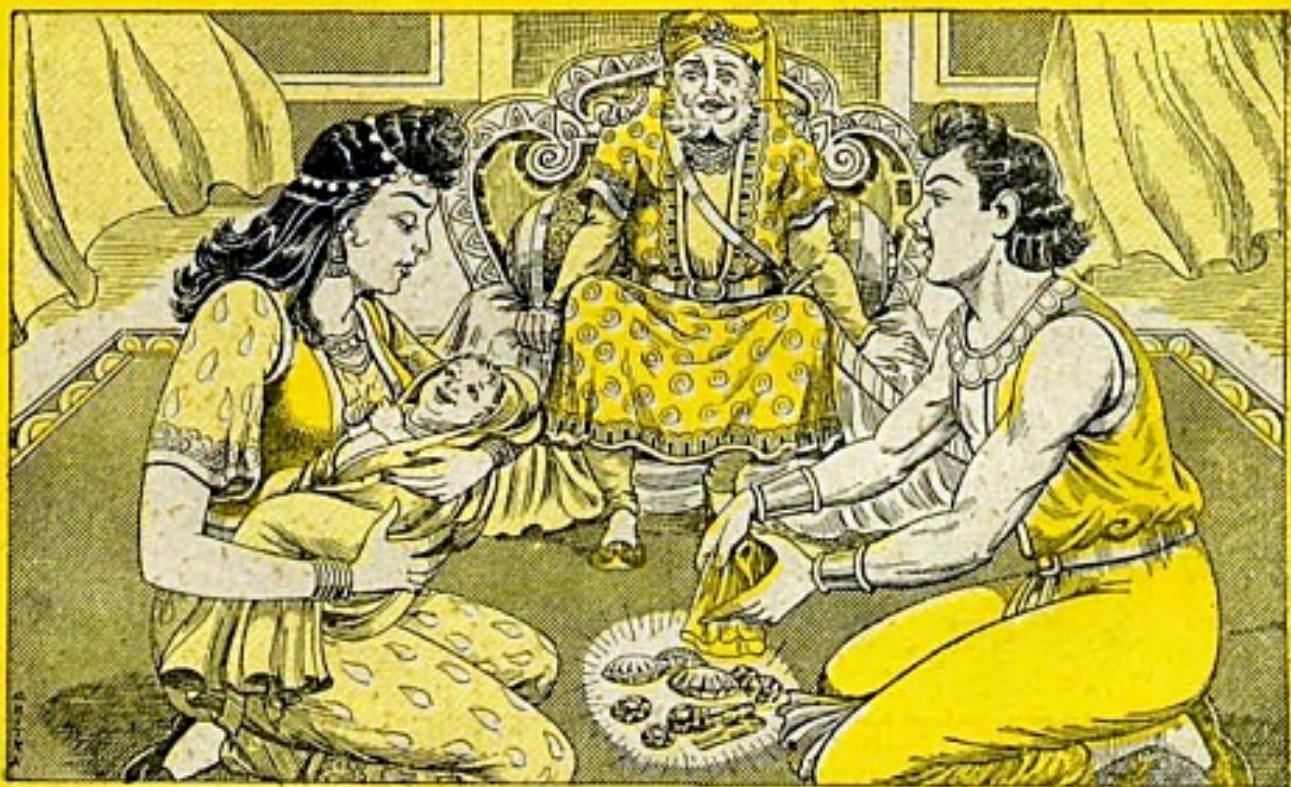
गुल्नार ने अपने भाई को कृतज्ञता दिखाकर, अपने पति से कहा—"ये आपकी योग्यता के अनुकूल नहीं हैं, आपने जो हमारा उपकार किया है, वे इस जन्म में हम नहीं भूल सकते।"

बादशाह ने अपने साले को गले लगा लिया। उसने इच्छा प्रकट की कि उसके साथ आई हुई स्त्रियाँ चालीस रोज़ उसके यहाँ ठहरें और दावत वगैरह खायें।

चालीस दिन बाद सालिहा ने जाने के लिए बादशाह से इज़ाजत माँगी। उसने कहा कि वह घर वापिस जाना चाहता था। जलवासियों के स्वाथ्य के लिए इतने दिन भूमि पर रहना ठीक न था। मैं कभी कभी बहिन और भान्जे को देखने आता ही रहूँगा।

"मैं भी तुम्हारे राज्य में आना चाहता हूँ। पर वह सम्भव नहीं है। फिर मैं पानी से भी बहुत डरता हूँ।" बादशाह ने कहा।

फिर गुल्नार के बन्धु समुद्र में कूदे और जैसे आये थे, वैसे ही चले गये।

बद्रबसीम जब तक चार साल का न हो गया तब तक गुल्नार ने ही उसको

दूध दिया। इसलिए उस दूध के साथ समुद्र मानवों के गुण भी बहुत से आ गये। माँ के दूध से उसको अच्छा स्वाथ्य और सौन्दर्य भी मिला। पन्द्रह बरस होते होते, वह अच्छा, हट्टा-कट्टा, बुद्धिमान, पंड़ित और विवेकी हो गया।
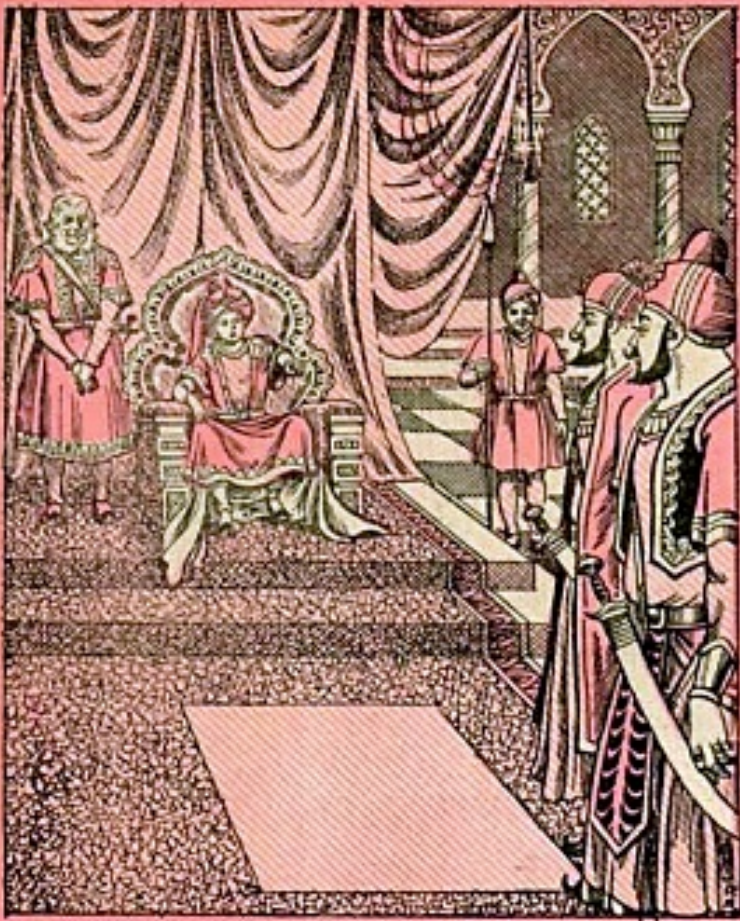
बादशाह बूढ़ा हो गया। उसने जीते जी ही अपने लड़के को बादशाह बनाने का संकल्प किया। उसे अपने लड़के पर प्रेम तो बहुत था ही उसमें उसको बादशाहों के लक्षण भी दिखाई दिये। वह एक दिन बद्रबसीम को दरबार ले गया। उसे उसने बादशाह उद्घोषित किया, गद्दी से स्वयं उतरकर, उसको बिठाया। उसके सिर पर ताज़ रखा और उसके बायें ओर खड़ा हो गया।

बद्रबसीम ने उस दिन का दरबार स्वयं चलाया। राजकार्य में उसने इतनी बुद्धिमत्ता दिखाई कि उसके पिता और मन्त्रियों को आश्चर्य हुआ। उस दिन दुपहर को वह पिता के साथ अपनी माँ के पास गया। माँ ने उसके सिर पर ताज़ देखकर आनन्दाश्रु बहाये।

एक साल तीनों सुख से जीये। उसके बाद बादशाह की मौत का समय आया। उसने एक बार अपनी पत्नी और लड़के का आलिंगन करके प्राण छोड़ दिये।

माँ और बेटे ने बादशाह की मौत के कारण, एक महीने तक किसी को न देखा। फिर उन्होंने बादशाह के लिए मकबरा बनवाया। उनकी ओर से गरीबों, विधवाओं और अनाथों में दान-धर्म के लिए अलग निधि की व्यवस्था की।

समुद्र लोक में से गुलनार के बन्धु आये। वे इस बीच कई बार आये गये थे। उनको इसका बडा अफसोस रहा कि

वे बादशाह की अन्तिम घड़ी में उनके पास न थे। रोने-धोने में ही कुछ हफ़्ताह गुज़र गये। बद्रबसीम ताज़ वगैरह पहिन कर दरबार चलाने लगा। यूँ एक और साल बीत गया।

एक दिन शाम को सालिहा समुद्र में से अपनी बहिन और भान्जे को देखने आया। बद्रबसीम एक खाट पर सोया हुआ था। भाई बहिन में कितनी ही बातें हुईं। बातों बातों में सालिहा अपने भान्जे के गुणों की बड़ी प्रशंसा करने लगा। उनकी बातें सुनना ठीक न था, यह सोचकर बद्रबसीम ने आँखें इस तरह बन्द कर लीं, जैसे सो रहा हो।

यह देख कि उसका भान्जा सो रहा था सालिहा ने उसकी शादी की बात छेड़ी। "तेरा लड़का शादी के लायक सयाना हो गया है। एक समुद्र की राजकुमारी खोजकर, जल्दी ही उसका विवाह कर देना ठीक है।"

"मैं इससे अधिक और क्या चाहूँगी। मेरा एक ही लड़का है। मैं उसकी सन्तान देखना चाहती हूँ। पर यह तो बताओ कि शादी के लायक लड़कियाँ हैं कौन कौन?"

सालिहा ने बहुत-सी लड़कियों के बारे में कहा। गुलनार भले ही उनको न जानती हो, पर उनके माँ-बाप को जानती थी। उसने एक की पिता को खराब बताया, दूसरी की माँ को खराब बताया, तीसरी के वंश को खराब बताया, चौथी ठीक तरह पाली-पोसी नहीं गई थी, बताया। इस तरह गुलनार ने सबको एक-एक करके ठुकरा दिया।

"लड़के से शादी करनेवाली बहू के बारे में तुम्हारा उत्साह प्रशंसनीय है। एक और लड़की के बारे में बताता हूँ,

मगर हमारे लड़के का उसके बारे में सुनना, उतना अच्छा नहीं है। ज़रा, देख आओ कि वह सो रहा है कि नहीं?" सालिहा ने कहा।

गुलनार उठी, अपने लड़के को लेटा देख, उसने सोचा कि वह सो रहा था, वापिस आकर उसने कहा—"हाँ, बताओ...."

"एक राजकुमारी है। उसको हमारे लड़के की पत्नी बनाना असम्भव-सा है। उसका पिता मर जायेगा, पर इसके लिए मानेगा नहीं। जब तक सम्बन्ध निश्चित नहीं हो जाता, तब तक मेरे भान्जे का उसके बारे में सुनना ठीक नहीं है। प्रेम कानों के रास्ते बड़ी आसानी से पहुँचता है। जब वह प्रेम सिर पर चढ़ने पर मिल जाता है, तो वह अमृत है, जब तिरस्कृत होता है, तब विष।"

"फिर भी वह लड़की कौन है? उसका पिता कौन है?" गुलनार ने पूछा।

"लड़की का नाम जहाँनारा है। समन्दल की राजकुमारी है, उसके समान सुन्दर न भूमि पर कोई है, न समुद्र में ही। उसका रंग, उसके बाल, उसकी आँखें, सब वर्णनातीत हैं।" सालिहा ने कहा।
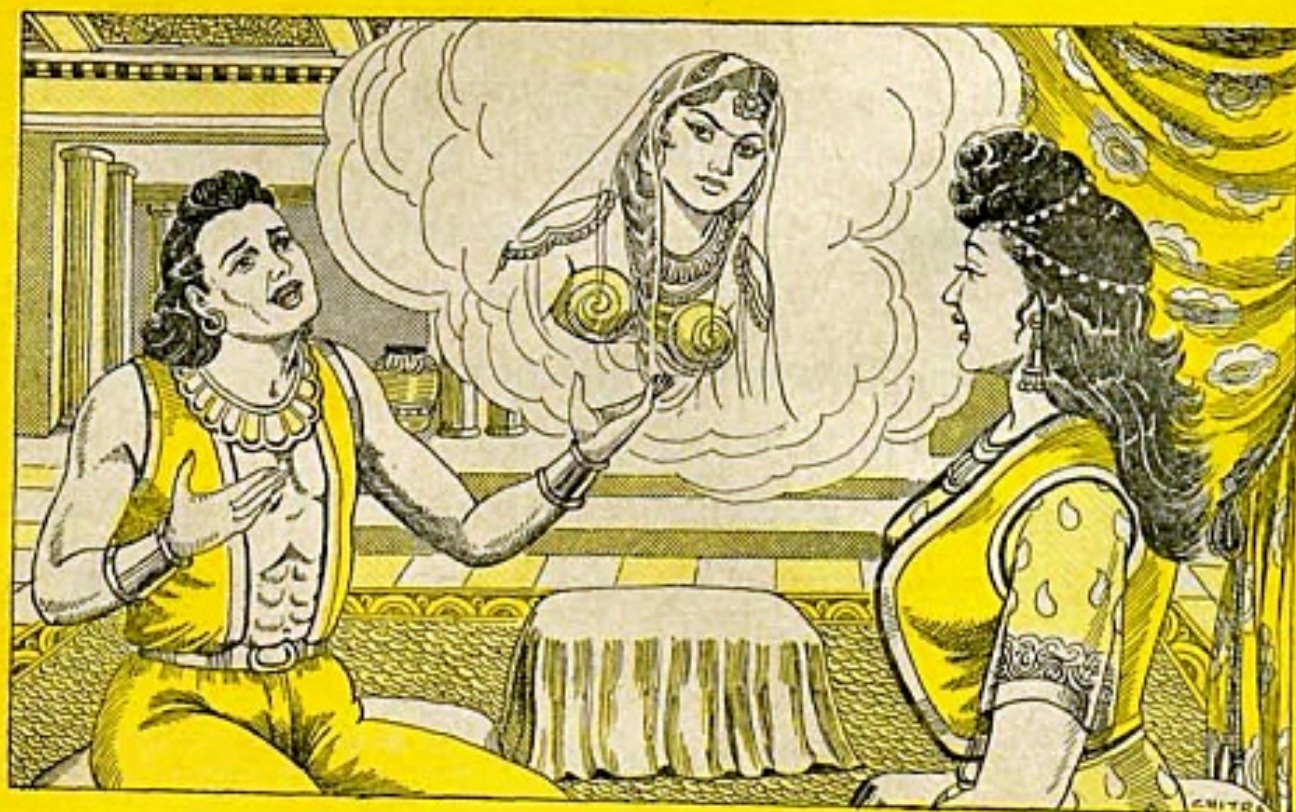
"यानि नाम के अनुरूप लड़की है। उसकी शादी मैं अपने लड़के से कर दूँगी।" गुल्नार ने कहा।

"यह सब तो ठीक है। पर उसके पिता के बारे में क्या कहती हो? वह समन्दल निरा पशु है, राक्षस। जो जो राजकुमार, उस राजकुमारी से शादी करने आये, उन सब को उसने मरवा-पिटवाकर अपमान किया। हमने अगर जाकर माँगा, तो न मालूम क्या कहेगा? यह सोचकर ही मैं सिहर उठता हूँ। इसलिए ही मैं ज़रा झिझक रहा हूँ।" सालिहा ने कहा।

"यही बात है, तो हमें जल्दी करनी चाहिए। कोई न कोई रास्ता निकालना होगा।" गुल्नार ने कहा।

"तुम भी सोचते रहो, कोई न कोई रास्ता अवश्य मिल जायेगा।" सालिहा ने कहा।

यह सम्भाषण समाप्त होते ही उन्होंने देखा, बद्रबसीम उठ गया था, इसलिए उन्होंने बात करना छोड़ दिया। पर जो होना था सो हो गया। बद्रबसीम का दिल जहाँनारा के लिए तड़पने लगा। उसने यह बात न अपनी माँ से कही, न मामा

से ही। पर दिन रात इसी फिक्र में रहने लगा कि उसकी इच्छा कैसे पूरी होगी।

वह सवेरे सवेरे उठा। अपने मामा को उठाकर उसने कहा—"मामा, समुद्र के किनारे टहलने की मर्जी हो रही है। क्या तुम भी आओगे?" सालिहा मान गया। दोनों समुद्र तट पर गये। वे काफ़ी देर तक रेत पर चलते रहे, पर बद्रबसीम ने अपने मामा से कुछ भी नहीं कहा। वह निराश हो, एक पत्थर पर बैठ गया। समन्दल राजकुमारी जहांनारा के बारे में एक प्रेम गीत गाने लगा।
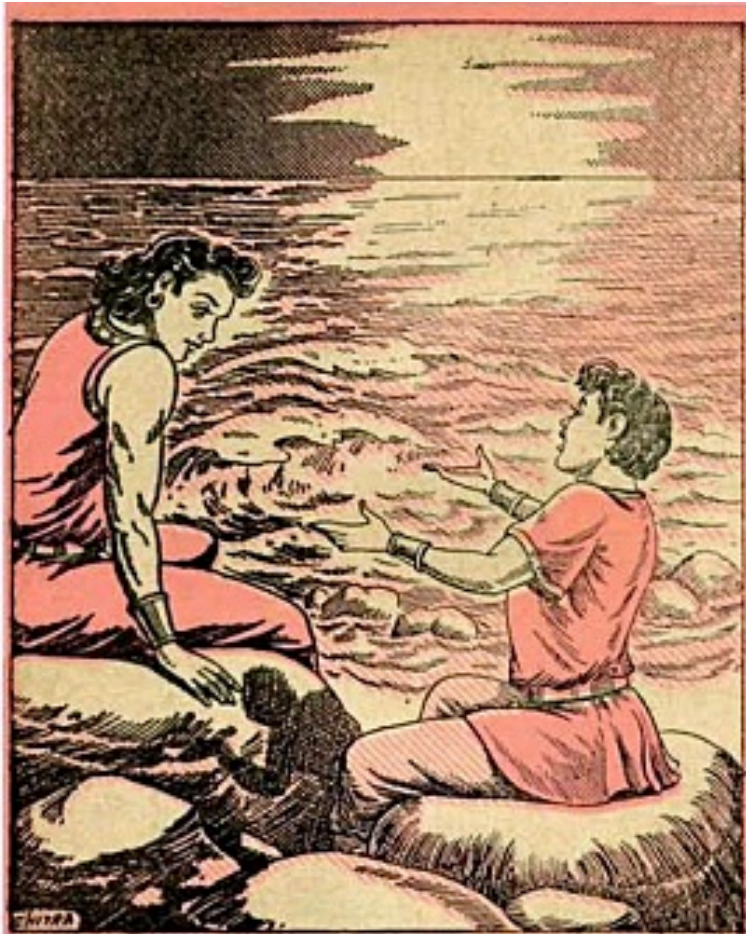
यह गीत सुनते ही सालिहा ने कहा—"सब अल्लाह की मर्ज़ी है। यानि जो कुछ मैंने तुम्हारी माँ से कहा था, वह सब तुम सुन रहे थे। अभी इस बारे में बातचीत भी शुरु नहीं हुई है और तुम उस लड़की को अपने दिल सौंप बैठे। मुझे इसका बड़ा अफसोस है।

"मैं बिना उसके जी नहीं सकता हूँ।" बद्रबसीम ने कहा।

"तो चलो घर चलें। अपनी माँ से कहो। समन्दल राजा के पास चलेंगे।" सालिहा ने कहा।

"मैं माँ से नहीं पूछूँगा, वह वैसे भी अनुमति न देगी। समन्दल क्योंकि पशु तुल्य है, इसलिए वह डर रही है कि न जाने वह मेरा क्या करे। कहेगी कि मेरे जाने से राजकार्य सब रुक जायेंगे, शत्रु मेरा सिंहासन ले लेंगे। क्या मैं अपनी माँ को नहीं जानता हूँ?" बद्रबसीम ने कहा। उसने जिद पकड़ी कि तुरत समन्दल राजा के पास जाना है और माँ को पता लगने से पहिले ही वापिस आना है।

सालिहा भी क्या कर सकता था? अल्लाह के भरोसे, वे दोनों समुद्र में कूदे।

सालिहा ने उसकी रक्षा के लिए एक अंगूठी भी दी।

सालिहा पहिले भान्जे को अपने घर ले गया। पोते को देखकर, नानी वगैरह स्त्रियाँ बड़ी खुश हुईं।

"आज कितना अच्छा दिन है बेटा, आओ। क्या तुम्हारी माँ ठीक है?" गुल्नार की माँ ने पूछा।

"हाँ, उसने तुम सब के बारे में पूछा था।" बद्रबसीम ने यूँहि कहा।

जब और लड़कियाँ बद्रबसीम को अपना घर दिखाने गईं, तो सालिहा ने अपनी माँ से जो कुछ गुज़रा था, बताया।

माँ ने उसे बड़ा डाँटा फटकारा। "जानते हो, समन्दल कैसा धूर्त है। वह निरा बेअक्ल और घमंडी अधिक है। उस हालत में क्या तुम उसके बारे में बात कर सकते हो, जब लड़का सो रहा था? उसका नाम भी तुम्हें उसके सामने नहीं लेना चाहिए था?"

"सच है। पर जो हो गया है, उसके बारे में सोचने से क्या फायदा? समन्दल एतराज भी किस बात पर कर सकता है? बद्रबसीम खूबसूरती में उस लड़की से कोई कम नहीं है। उसका वंश भी बड़ा है। वह स्वयं एक बड़े साम्राज्य का बादशाह है। मैं समन्दल से स्वीकार करा सकता हूँ कि इस प्रकार का सम्बन्ध मिलना ही सौभाग्य की बात है। चूँ कि गल्ती मेरी वजह से हुई है इसलिए मुझे ही प्रतिनिधि होकर जाना चाहिये, अगर हड्डियाँ टूटनी हैं, तो मेरी हड्डियाँ ही टूटेंगी।" सालिहा ने कहा।

उसने दो थैलों में उपहार भरे। गुलामों से उनको उठवाकर, वह समुद्र के मार्ग से समन्दल राजा के महल की ओर गया।

महल में पहुँचते ही, सालिहा ने अन्दर खबर भिजवाई कि वह राजा को देखना चाहता था। जल्दी ही अन्दर आने की अनुमति मिली। अन्दर हाल में रत्नों के आसन पर समन्दल राजा बैठा था। उसको देखकर सालिहा ने गौरवपूर्वक अभिवादन किया। जो थैलियाँ वह लाया था, उसने उसके पैरों पर रखीं।

"बैठो सालीहा, तुम्हें देखे बहुत दिन हो गये हैं। बताओ, तुम किस काम पर आये हो। जो भेंट लाते हैं उसके अनुसार प्रतिफल की भी अपेक्षा करते हैं। बताओ। देखें कि मैं वह कर सकता हूँ कि नहीं।" समन्दल ने कहा।

सालिहा ने झुककर सलाम करके कहा—"यह सच है कि मैं एक काम पर आया हूँ। वह अल्लाह की मेहरबानी, से और आपकी मेहरबानी से ही हो सकता है। आपका शौर्य, पराक्रम, कीर्ति, मर्यादा, महिमा अतुलनीय है। उनके बारे में समुद्र में रहनेवाले और भूमि पर रहनेवाले भी कहते सुनते रहते हैं। शाम के समय वह अपनी कहानी सुनते बिताते हैं।"

"सालिहा! तुम यह बताओ कि तुम चाहते क्या हो? मैं सहानुभूतिपूर्वक सुनूँगा। अगर हो सका, तो मैं तुम्हारी इच्छा पूरी करूँगा। नहीं हो सकेगा, तो साफ़ साफ़ कह दूँगा कि नहीं कर सकता।"

सालिहा ने इस बार और झुककर सलाम किया। "आप ही मेरा काम पूरा कर सकते हैं। आप अपनी लड़की जहाँनारा की मेरे भान्जे बद्रबसीम से शादी कर दीजिये। वह शारिमान का लड़का है। फारस के सरहद से खुरासान

तक फैले हुए साम्राज्य का वह सम्राट है।"

यह सुनते ही समन्दल का हँसते हँसते पेट फूल गया। हँसी के बाद उसने गम्भीरता से सालिहा की ओर देखकर कहा—"हो....हो...." वह फिर जोर से हँसने लगा।

हँसी रोकने के बाद, उसने कहा—"सालिहा! मैंने तो तुम्हें अक्लमन्द समझा था। मेरा ख्याल गलत था, अब यह साबित हो गया है। क्या इस ऊँटपटाँग इच्छा का भी कोई मतलब है?"

"एक बात मैं निश्चय पूर्वक कह सकता हूँ। बद्रबसीम सौन्दर्य में, सम्पत्ति में, वंश में तुम्हारी लड़की से कोई कम नहीं है। यदि तुम्हारी लड़की उस जैसे वर से शादी नहीं करेगी, तो किससे करेगी? मुझे समझ में नहीं आता। कहते हैं कि स्त्री के भाग्य में विवाह है, नहीं तो मौत। मैं आपकी लड़की को मौत से बचाने के लिए एक उपाय बताता हूँ। यह मौका न जाने दीजिये।" सालिहा ने कहा।

समन्दल राजा को गुस्सा आ गया। "कुत्ते कहीं के, मेरी लड़की का नाम लेते हो? कौन है तुम्हारा भान्जा? उसका बाप कौन है? सब कुत्ते हैं? कहाँ है वह? उस नीच को पकड़कर हड्डी हड्डी तोड़ दो।

समन्दल के सैनिकों ने सालिहा को घेर लिया। परन्तु वह फुर्ती से, चालाकी से, बिजली की तरह उनसे बचकर डयोढ़ी में से बाहर भाग गया।

[अभी है]

जो जितना देता है उतना पाता है

एक गाँव में दो अनाथ स्त्रियाँ एक जगह रहा करती थीं। घर तो उनके अलग अलग थे, पर उनकी छत एक थी। दोनों करीब करीब एक ही उम्र की थीं। दोनों का कोई न था। परन्तु उनमें एक बड़ा भेद था। एक उनमें से हमेशा अपना स्वार्थ ही देखती और दूसरी स्त्री हमेशा भला करती।

इन स्त्रियों के घर के सामने बौद्ध सन्यासियों का एक मठ था, उसमें रहनेवाले भिक्षु हमेशा या तो ध्यान किया करते, या अपने आँगन में खेती का काम करते, या लोगों की मदद किया करते।

एक दिन रात को बड़ा तूफ़ान आया। स्वार्थी स्त्री भोजन के लिए बैठी थी कि किसी ने दरवाजा खटखटाया। उसने तुरत रसोई के बर्तन छुपा दिये और किवाड़ खोले। "तूफ़ान में शायद कोई राहगीर शरण लेने आया है। अच्छा होगा यदि खाने की चीज़ें उसकी नज़र में न पड़ें।"

मगर जब उसने दरवाजा खोला, तो एक बौद्ध सन्यासी अन्दर आया। वर्षा से बचने के लिए उसने मुँह पर कपड़ा डाल रखा था, इसलिए उसका मुँह ठीक तरह न दिखाई दिया। "शायद तुम खा रही थी, मैंने तुम्हें बाधा पहुँचायी।"

यह अचरज करती कि यह बात उसको कैसे मालूम हुई थी, उस स्त्री ने उसको भोजन के लिए निमन्त्रित किया। जब उसे मालूम होता कि किये हुए उपकार का दस गुना प्रत्युपकार मिलेगा, तब वह सहसा दानशील हो जाती थी।

उसके मुँह को जानने की अपेक्षा उस स्त्री ने यह जानना चाहा कि वह उससे क्या सहायता लेने आया था।

"तूफ़ान उमड़ रहा है। धनियों के घर कितने आरामदेह होते हैं, अब यह मालूम हो रहा है। मगर बिचारे गरीबों की हड्डियाँ भी इस बारिश में जम-सी जाती हैं।" सन्यासी ने कहा।

"हाँ, हाँ, यदि ऐसी हालत में दयालु सहायता न करें तो गरीबों का क्या होगा?"

"हाँ, उसी उद्देश्य से मैं इस बारिश में, यहाँ आया हूँ।" सन्यासी ने कहा।

"पुण्यात्मा हो।" उसने कहा।

"दान करनेवाले ही पुण्यात्मा हैं। अब तुम्हारे लिए पुण्य कमाने का मौका आया है। जो तुम से अधिक कष्ट झेल रहे हैं, उनकी मदद आज तुम्हें करनी होगी। दो बेघरबार मठ में पहुँच गये हैं। बिजली गिरने के कारण उनका घर जल गया है। उनका सर्वस्व जल गया है। वे बूढ़े हैं। बेघरबार हैं। वे इस तूफ़ान में फँस गये हैं। उनको देने के लिए मठ में कुछ नहीं है। यदि रात को सोने के लिए तुमने कुछ दिया, तो

सन्यासी ने भोजन मना किया। उस स्त्री ने उसको चोटी से ऐड़ी तक देखा, कहीं ऐसा न हो कि वह उसके लिए कुछ लाया हो। पर न उसकी बगल में, न हाथ में ही उसको कुछ दिखाई दिया। तब उस स्त्री ने उसके मुँह की ओर देखा। उसके लिए वह परिचित मुँह न था। वह मुँह अपरिचित तो था ही, बौद्ध सन्यासियों के मुँह की तरह भी न था। उस हल्की रोशनी में वह उसे गोरा, सुन्दर, चमचमाता हुआ दिखाई दिया।

सवेरे तुम्हारी चीज़ तुम्हें वापिस दे देंगे।" सन्यासी ने कहा।

उस स्त्री ने अपनी झुँझलाहट को छुपाये बगैर कहा—"मैं गरीब हूँ। अनाथ हूँ। यदि कोई दे, तो लेती हूँ। मैं भला क्या दे सकती हूँ।"

"क्या एक कम्बल भी नहीं दे सकते। वे इतनी देर वर्षा में भीग रहे हैं।" सन्यासी ने कहा।

उसका माथा ठनका। थोड़ी देर पहिले जब सेठ के घर उसकी लड़की का विवाह हुआ था, तब उसको अच्छा कम्बल दान दिया गया था। उसने सोचा कि शायद सन्यासी को यह बात मालूम हो गई होगी। कुछ भी हो, उसने वह कम्बल सन्यासी को नहीं देना चाहा। कहीं कोई पुराना चादर मिल जाये, यह देखने के लिए वह अन्दर गई।

दो तीन चादरें थीं, पर सभी अच्छी थीं। अभी बहुत दिन आतीं। न मालूम वे अनाथ गन्दे हैं, अपाहिज हैं, गँवार हैं। अगर ये अच्छी चादरें उनको दे भी दीं, तो न मालूम फिर ये किस रूप में वापिस मिलें। फिर उसको एक पुराना कपड़ा याद

आया। उसका उपयोग वह बहुत दिनों से नहीं कर रही थी। जब वह झाड़कर उसे देखने लगी तो उसे लगा कि वह भी कभी न कभी काम आ सकता है।

फिर भी वह सन्यासी को खाली हाथ नहीं भेज सकती थी। उसे उसने उसको देते हुए कहा—"इसे ही मैं बिस्तरे पर बिछा रही हूँ। उम्र हो गई है। इसी की वजह से मेरा जोड़ों का दर्द कुछ कम हुआ है।"

"वे भी तुम्हारी उम्र के हैं, और तो और जो कुछ उनके पास था, वह सब वे

खो बैठे हैं। क्या इसके सिवाय तुम कुछ और नहीं दे सकती?" सन्यासी ने पूछा। जब उसने शपथ करके कहा कि उसके पास कुछ न था, तो सन्यासी चला गया।

उसने दूसरी स्त्री के घर का किवाड़ खटखटाया। उससे भी वह सब कहा, जो इस स्त्री से कहा था। तुरत उसने वह कम्बल, जो सेठ के घर उसे दिया गया था, बिस्तर चादर, आदि लाकर सन्यासी के सामने रखे। "क्या और कुछ चाहिये?" उसने पूछा।

"यह काम में आ जायेगी....यह भी....!" कहते हुए उस सन्यासी ने एक चटाई उसके सोने के लिए छोड़ दी, बाकी सब चीज़ें लेकर चला गया।

उसके जाने के बाद तूफ़ान और बढ़ गया। रात में ऐसी भयंकर ध्वनि हुई, मानों आकाश ही फूट पड़ा हो। अनाथ स्त्रियों के घर के छत पर बिजली गिरी और छत जलने लगी। दोनों स्त्रियाँ जान बचाकर तूफ़ान में, बारिश में भागने लगीं। जो सन्यासी उनके पास आया था, वह उनको मिला। उसने उन दोनों का हाथ पकड़कर कहा—"मठ में आइये।"

अगले क्षण वे दोनों मठ में थीं। वे नहीं जानती थीं कि वे वहाँ कैसे पहुँची थीं।

"आप अपनी अपनी चीज़ें ले लीजिये।" उसने कहा।

"परन्तु उन विचारों का क्या होगा, जो बारिश में यहाँ आये थे?" दूसरी स्त्री ने पूछा।

"आप ही वे अनाथ हैं।" कहता सन्यासी अन्तर्धान-सा हो गया।

P. G. REDDY

पत्थर की मूर्ति

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव को उतारकर, कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"तुम्हें देखकर श्रीधर की कहानी याद आ रही है। उसने अपने शिल्प से अपना ही अहित किया था। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने तब यों कहानी सुनानी शुरु की।

अमरावती नगर में नयसागर नाम का मन्त्री रहा करता था। वह अपने बन्धुओं को चाहता था। इसलिए उसने बन्धुओं को बुलाया और उनकी योग्यता के अनुसार राज्य में, छोटी बड़ी नौकरियाँ उनको दिलवा दीं। जिनके पास नौकरी के लिए

योग्यता न थी, उनको अपने घर में रखकर, उनके लिए किसी न किसी काम की व्यवस्था करता। इस तरह के बन्धुओं में श्रीधर भी एक था, वह देखने में सुन्दर था और बातें भी अक्लमन्दी से किया करता था। होने को तो सब तरह से अच्छा था, पर पढ़ा लिखा न था। किसी कला में भी उसको निपुणता न थी। महामन्त्री ने श्रीधर को कोई विद्या, या कला सिखाने की कोशिश की, पर श्रीधर ने किसी चीज़ में भी दिलचस्पी न दिखाई। जब उसको घर में काम करनेवाले, बाग में काम करनेवालों की देख रेख करने के लिए कहा गया, तो वह पहाड़ों में चला जाता और नालों के किनारे बैठकर घंटों प्राकृतिक शोभा देखा करता।

यह सब भी मन्त्री ने सह लिया। यह जानकर भी कि श्रीधर बिल्कुल निकम्मा था, मन्त्री उसे प्रेम की दृष्टि से ही देखा करता था। परन्तु यह बात मालूम हुई कि वह उसकी इकलौती लड़की वत्सला से प्रेम ही नहीं करने लगा था, परन्तु उसका प्रेम पाने की भी कोशिश कर रहा था। जब श्रीधर अमरावती आया था, तब वत्सला

छोटी लड़की थी। शुरु से ही वह श्रीधर से अधिक हिली हुई थी। परन्तु अब वत्सला सयानी हो गई थी। राजा की लड़की की उम्र भी वत्सला जितनी थी और उसकी शादी के बारे में बातचीत चल रही थी। मन्त्री भी राजकुमारी के विवाह के बाद, तुरत वत्सला का विवाह कर देना चाहता था।

इसलिए उसने एक दिन वत्सला को बुलाकर कहा—"बेटी, पहिले की तरह अब तुम्हारा श्रीधर जैसे लड़कों के साथ घूमना-फिरना अच्छा नहीं है। जल्दी ही तुम्हारी शादी करने की जिम्मेवारी मुझ

पर है। जब तक तुम्हारी शादी नहीं हो जाती, तब तक तुम्हारा इस प्रकार का व्यवहार रहना चाहिए कि कोई तुम पर अंगुली न उठाये।"

वत्सला ने नादानी से कहा—"श्रीधर, अच्छी अच्छी कहानियाँ सुनाता है। हँसता है। क्या उससे बात करना भी ठीक नहीं है, पिताजी?"

यह देख कि उसकी लड़की में उसका ईशारा समझने का भी लोक ज्ञान न था, मन्त्री ने श्रीधर को कहीं भेज देने का निश्चय किया। उसने उस लड़के को बुलाकर कहा—"बेटा, तुम्हारा यहाँ आराम से रहना, मुझे पसन्द है, पर ऐसे ही रहोगे, तो बिल्कुल निखट्टू हो जाओगे। इसलिए तुम्हें बहुत धन दूँगा। कहीं भी जीओ, जो तुम आजीविका का रास्ता सीख सको, सीखो, खूब बड़े होकर फिर वापिस आओ।"

श्रीधर ने जाने से पहिले वत्सला से मिलकर कहा—"तुम्हारे पिता कह रहे हैं कि मैं बिल्कुल किसी काम का नहीं हूँ। देखते रहो, मैं ऐसे काम करूँगा कि मेरी कीर्ति देश-विदेश में फैलेगी।"

वह कुछ दिन चलने के बाद एक गाँव में पहुँचा। वह शिल्पियों का गाँव था। कुछ मिट्टी के खिलौने बनाकर, उन्हें सेंक कर, उन पर रंग लगा रहे थे। कुछ और लकड़ी के खिलौने बना रहे थे। पर सब से अच्छे श्रीधर को वे लगे, जो काले पत्थर और संगमरमर से मूर्तियाँ तैयार कर रहे थे। वह उसी गाँव में रहने लगा, रोज़ वह उन शिल्पियों के पास जाता, उनकी कहानियाँ सुनता और जो कुछ वे कर रहे होते, उसे गौर से देखता। रात में वह भी संगमरमर के छोटे-छोटे टुकड़े ले आता और अपनी इच्छा के अनुसार उनसे मूर्तियाँ बनाया करता।

श्रीधर किसी के यहाँ शिष्य न हुआ, न उसने किसी का अनुकरण की किया। वह स्वयं ही अपना गुरु था। उसने शिल्प विद्या सीख ली। वह अवश्य निपुण शिल्पी थी। उसने पहिले पहल जो मेंढ़क, बिल्लियाँ वगैरह बनाईं, वे ऐसी लगती थीं, जैसे वे सजीव हों। बनाने को, उसने काले पत्थर से भी मूर्तियाँ बनायी थीं, पर उसको संगमरमर ही भाता था। जब उसे भान हुआ कि वह जो चाहे संगमरमर के पत्थर

से बना सकता था, उसने एक बड़ा संगमरमर का टुकड़ा खरीदा। उससे उसने एक बड़ी-सी स्त्री की मूर्ति बनायी—स्त्री मुस्कराती, सुनती-सी बैठी थी। वह देखने में बिल्कुल वत्सला जैसी थी। जब वह कहानियाँ सुनाया करता था, तब वत्सला उसी तरह बैठकर सुना करती थी। वत्सला का वह रूप उसके मन में हमेशा के लिए घर कर गया था। उसी रूप को उसने मूर्ति का आकार दे दिया था। श्रीधर उस मूर्ति से पूर्णतः सन्तुष्ट था, बड़े-बड़े शिल्पी पत्थर में इस प्रकार प्राण नहीं डाल सके थे। कोई उसे असमर्थ नहीं कह सकता था—इस विश्वास से उस स्त्री की मूर्ति को लेकर अमरावती गया।

श्रीधर को वापिस आया देखकर, सब से अधिक मन्त्री ही खुश हुआ—चूँकि उसके मन को यह बींध रहा था कि उसीने उसको भेज दिया था। श्रीधर वापिस तो आया ही था, साथ एक आश्चर्यजनक मूर्ति भी लाया था—जब यह मन्त्री को मालूम हुआ, तो वह और भी प्रसन्न हुआ। श्रीधर ने अपनी मूर्ति एक मेज़ पर रखी, पहिले मन्त्री को विश्वास न हुआ कि उसे श्रीधर ने ही बनाया था। पर इतने में किसी ने कहा—"यह तो हुबहू, वत्सला ही है।" इससे यह सिद्ध हुआ कि श्रीधर ने ही उसे बनाया था।

ठीक उसी समय राजकुमारी का विवाह हुआ। मन्त्री ने श्रीधर की बनाई हुई मूर्ति को राजकुमारी को उपहार में दी। उसे देखकर सब ने शिल्पी की प्रशंसा की। श्रीधर की कीर्ति राजमहल में भी पहुँची।

फिर भी श्रीधर के वत्सला के साथ विवाह की सम्भावना कोई विशेष बढ़ी नहीं। "भले ही वह बड़ा कारीगर हो,

पर मैं अपनी लड़की पत्थर गढ़नेवाले को नहीं दूँगा।" मन्त्री ने कहा। वत्सला यह सुनकर बड़ी दुःखी हुई। श्रीधर के चले जाने के बाद उसके लिए वियोग सहना कठिन हो गया था। जब वह वापिस आ गया, तो वत्सला का उस पर प्रेम दुगना हो गया। जब उसने उसकी मूर्ति इतनी सुन्दर बनाई थी, तो उसने निश्चय किया कि सिवाय किसी और से विवाह न करेगी। क्योंकि खुले आम मिल नहीं सकते थे। इसलिए उन दोनों ने आधी रात के समय कहीं चले जाने का निश्चय किया। मन्त्री को चूँकि सन्देह था कि कोई ऐसी बात होनेवाली थी, उसने एक बूढ़े को, जिसने वत्सला को बचपन में गोदी में खिलाया था, रात में उसको देखने के लिए नियुक्त किया।

वत्सला और श्रीधर जब घर छोड़ कर जा रहे थे, तो अस्सी वर्ष का बूढ़ा उद्यान के द्वार पर उनके सामने आ गया, उसने वत्सला के दोनों हाथ पकड़ कर उससे कहा—"आप इस तरह के काम करके पिताजी की बदनामी नहीं कीजिए। जब तक मेरे शरीर में प्राण हैं, मैं आपको
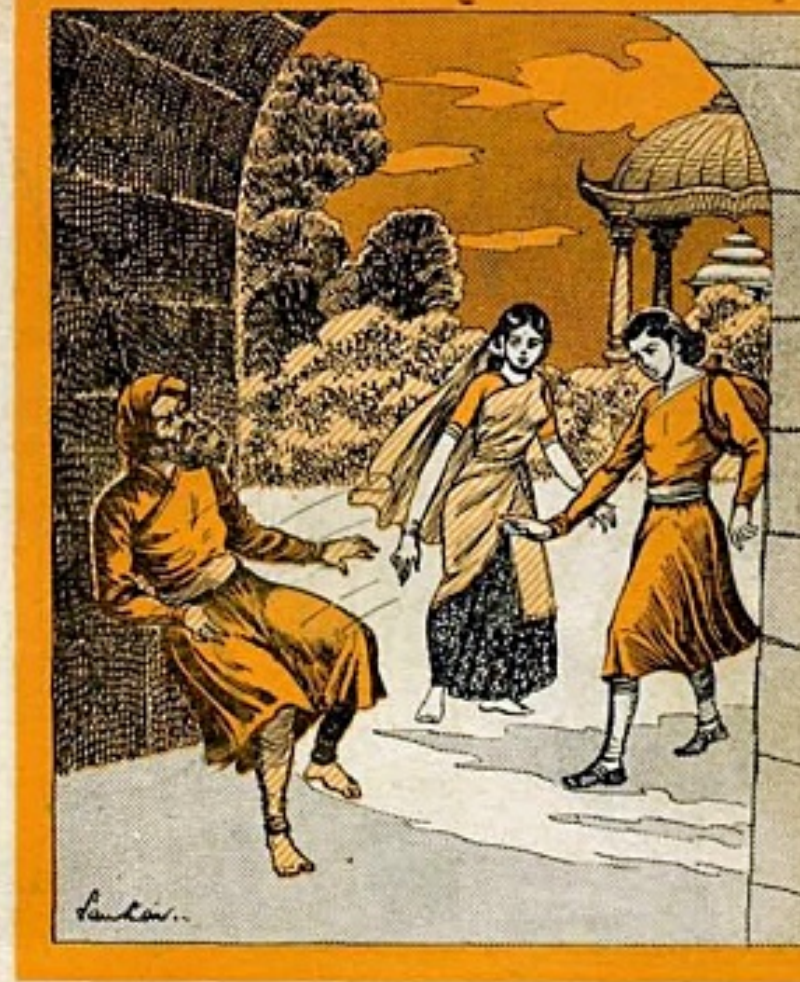
नहीं जाने दूँगा।" श्रीधर को न सूझा कि क्या करे। अगर वह इस बार सफल न होता, तो दूसरी बार शायद मौका न मिलता। यही नहीं। वत्सला का विवाह दो चार दिन में किसी के साथ निश्चित भी कर दिया जायेगा। इसलिए, श्रीधर ने बूढ़े को दोनों हाथ पकड़ कर धकेल दिया। उसका सिर दरवाजे के चौखट से लगा वह नीचे गिर गया और हिला नहीं।

फिर वत्सला और श्रीधर बहुत दिन यात्रा करके, एक दूर देश में पहुँचे।

वत्सला के गहने बेचकर उन्होंने गुजारा किया। फिर श्रीधर ने कहा -- "मैं एक विद्या जानता हूँ। बेचकर खाते गये, तो तुम्हारे गहने कितने दिन आयेंगे?" श्रीधर ने कहा। वह काला पत्थर, संगमरमर, जो भी मिला, उसे खरीदकर छोटी छोटी ऐसी मूर्तियाँ बनाने लगा, जो लोग खरीद सकें, उसने उन्हें सस्ते दामों पर बेच भी दिया।

उनको अभी आये बहुत समय भी नहीं हुआ था, कि उनको खबर मिली कि श्रीधर पर हत्या का दोष लगाया गया था। उसे मौत की सजा भी दे दी गई थी। इसकी घोषणा भी कर दी गई थी और उसे सब जगह ढूँढ़ा जा रहा था। यह खबर सुनते ही, श्रीधर, वत्सला के साथ दक्षिण देश चला गया। वत्सला गर्भवती थी। यात्रा सावधानी से और धीमे धीमे करनी पड़ रही थी। तीन महीने बाद वे एक बड़े नगर में पहुँचे।

"यहाँ हमें कोई नहीं जानता, मुझे अपनी विद्या को भुला देने की कोई जरूरत नहीं है।" श्रीधर ने कहा। वहाँ संगमरमर मुश्किल से मिलता। इसलिए, जो पत्थर मिलता वह उसी से मूर्तियाँ बनाता। वह प्रसिद्ध भी हो गया।

वत्सला के एक लड़का पैदा हुआ। उसके सुख में कोई कमी न थी। ज्यों ज्यों उसके लड़के की आयु एक एक महीना बढ़ती जाती थी उसका सुख सन्तोष भी बढ़ता जाता था। इस समय श्रीधर कहीं से संगमरपर का पत्थर ले आया, उससे अपने अपने लड़के और वत्सला की मूर्ति बनाई— वत्सला मूर्ति में, लड़के को अपनी गोद में लिये हुई थी। जब मूर्ति पूरी हो गई, तो श्रीधर ने उसे

पहिले वत्सला को नहीं दिखाया जब उसने देखा, तो उसे सन्तोष हुआ और भय भी। यदि कोई उसे देखेगा, तो श्रीधर को, जो तब नाम बदले हुये था। जान जायेगा। इसलिए उसने मूर्ति को अटारी पर रख दिया।

एक दिन श्रीधर की दुकान में एक उत्तर देशीय व्यक्ति आया। उसने श्रीधर की कला को देखकर कहा—"हमारे देशवालों के लिये ये मूर्तियाँ काफ़ी नहीं हैं।"

श्रीधर यह सुन कुछ क्रुद्ध हुआ। वह अन्दर गया और अटारी में से वह मूर्ति ले आया। "क्या आपके देश में इससे भी अधिक सजीव मूर्तियाँ बनाते हैं।"

"कमाल! कमाल! इसे कितने में बेचेंगे?" उत्तर देशीय व्यक्ति ने पूछा। श्रीधर ने कहा, चाहे वह कितना ही धन दे, वह उसे न बेचेगा। उत्तर देशीय व्यक्ति चला गया, थोड़ी देर बाद वह कुछ सैनिकों के साथ आया। "यह हत्यारा श्रीधर है, इसको अमरावती ले जाओ।" उसने श्रीधर को राजा की घोषणा दिखाई। "मैंने तुम्हें तो नहीं पहिचाना था, पर मन्त्री जी की लड़की की शक्ल पहिचान गया था।"

"मैं तुम्हारे साथ आने के लिए तैयार हूँ। मैं सामान वगैरह ठीक करके, अपनी पत्नी के साथ दो मिनिट में तैयार हो जाऊँगा।" कहता श्रीधर अन्दर गया। उसने पत्नी से हमेशा के लिए विदा ली। पिछवाड़े के रास्ते कहीं भाग गया। उसका फिर कहीं पता न चला।

राजकर्मचारी के साथ वत्सला अपने लड़के के साथ अपने पिता के घर पहुँची। वह ज़िन्दगी-भर वहीं रही। मन्त्री के घर की बैठक में उस मूर्ति को देखकर, सब चकित हुआ करते और मन्त्री उनको चकित होता देख, कहा करता—"यह मेरे दामाद ने ही बनाई है। बहुत बड़ा शिल्पी है वह।"

बेताल ने यह कहानी सुनाकर, राजा से कहा—"मुझे एक सन्देह हो रहा है। यदि श्रीधर उस मूर्ति को छुपाये रखता, तो न मालूम वह कितना सुख पाता। उसने अपने ही हाथों क्यों अपना सुख खराब कर लिया? यदि तुमने जानबूझकर इस सन्देह का निवारण न किया, तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।"

इस प्रकार विक्रमार्क ने कहा—"मनुष्य, केवल सुख के लिए ही नहीं जीता है। प्रतिभाशाली प्राण से भी अधिक अपनी प्रतिभा को समझता है। सुख शाश्वत नहीं है, पर प्रतिभा है। प्रतिभा के लिए प्रतिभाशाली का प्राण और सुख का बलिदान कर देना, अस्वाभाविक नहीं है।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। [कल्पित]

मूर्ख और धोखेबाज

एक मूर्ख ने एक धोखेबाज से दोस्ती की। इसी बात से जाना जा सकता है कि वह मूर्ख था। मूर्ख के पास कुछ पैसा था। धोखेबाज़ के पास कुछ भी न था।

"अगर हमने एक साथ पैसा खर्च किया तो झगड़ा हो सकता है कि एक ने कम खर्च किया और दूसरे ने अधिक। इसलिए पहिले तुम अपने पैसे खर्च करो और जब तुम्हारे पैसे खतम हो जायेंगे तब मैं खर्च करूँगा।" धोखेबाज ने कहा। मूर्ख मान गया।

जल्दी ही मूर्ख का पैसा खतम हो गया। "मैंने अपना रुपया एक जगह गाड़ दिया है। लाता हूँ, ठहरो।" कहता धोखेबाज गया, फिर रोता हुआ आया। "बाप रे बाप....कोई मेरा पैसा चुरा ले गया है। अब क्या किया जाये?"

"रोओ मत। क्या किया जाय? जैसे धन में हिस्सा बँटाया था, वैसे अब गरीबी में भी बँटायेंगे। परन्तु बिना काम किये, अब काम न चलेगा।" मूर्ख ने कहा।

"तुम्हारा कहना ठीक है। तुम क्या जानते हो? खेती का काम कर सकते हो? कुम्हार का काम या बढ़ई का काम, या जुलाहे का काम कर सकोगे? या राज का काम, दर्जी का काम, रंगरेज़ का काम....क्या कुछ कर सकोगे?" धोखेबाज़ ने पूछा।

मूर्ख ने कहा कि वह कुछ भी न जानता था।

"मुझे भी तेरी तरह कोई काम नहीं आता है। इसलिए हम रोज़ी के तलाश में देश में घूमेंगे।" धोखेबाज ने कहा।

दोनों मिलकर निकल पड़े। जाते जाते एक पहाड़ आया। पहाड़ के नीचे एक टूटी हुई गाड़ी थी। उस पर एक बड़ा सन्दूक था। गाड़ी के पास एक धनी खड़ा था। उस धनी ने इनको देखकर कहा—"देखने में तो ताकतवर मालूम होते हो, इस सन्दूक को यदि तुमने पहाड़ पर चढ़ाकर परली तरफ़ उतार दिया तो तुम दोनों को एक एक सोने का सिक्का दूँगा।

"देखा? काम मिल गया। उठाओ सन्दूक।" धोखेबाज ने कहा।

दोनों सन्दूक को कन्धे पर रखकर चलने लगे। "हम दोनों साथी हैं। इसलिए यदि तुम पर अन्याय हुआ तो मैं सह नहीं सकूँगा। हमें पहाड़ पर चढ़ना है, फिर उतरना है। चढ़ना कठिन है और उतरना आसान। इसलिए पहाड़ चढ़ते समय पहिले मैं चलूँगा, उतरते समय तुम पहिले।" धोखेबाज ने कहा।

मूर्ख यह न जानता था कि उसकी बात मानने से चढ़ते समय और उतरते समय भी उसी पर ही अधिक भार पड़ेगा। वह अपने मित्र की उदारता पर खुश हुआ। भार का तीसरा हिस्सा करीब करीब उसी पर ही पड़ा। पहाड़ के बाद एक धर्मशाला थी। जब सन्दूक को धर्मशाला पहुँचा दिया, तो धनी ने उनको तुरत दो सिक्के दे दिये।

चूँकि धर्मशाला में सब सुभीतायें थीं, इसलिए जब तक दो सिक्के खतम न हो गये, तब तक वे उसी धर्मशाला में रहे। फिर वे धर्मशाला के मालिक से कर्ज लेने लगे। जब उन्हें पता लगा कि अब कर्ज भी नहीं मिलेगा, वे एक दिन सवेरे धर्मशाला के मालिक के उठने से पहिले ही वहाँ से चम्पत हो गये।

बिना काम और भोजन के जब वे बहुत दूर चलते गये, तो उनको रास्ते के पास एक आदमी पत्थर कूटता दिखाई दिया। पास ही बासे भात की हंडी, एक छोटी सी करछी पड़ी थी। उस आदमी ने उनकी ओर देखकर कहा—"तुम भूखे मालूम होते हो, मुझे और जगह काम है, तुम ये सारे पत्थर तोड़ डालो और हंडी में रखा भात खा लो। बाद में ये करछी वगैरह झाड़ी के पास फेंक देना। मैं जाते समय ले जाऊँगा।"

इसके लिए ये दोनों मान गये। वह आदमी चला गया। धोखेबाज़ ने मूर्ख से कहा—"भूख के कारण कमज़ोर हुए हुये हैं। पहिले खाना खाकर बल आने दो। फिर पत्थर कूटेंगे। करछी तो एक ही है, इसलिए एक के बाद एक खायेंगे। तुम जितनी करछियाँ खाओगे, उतनी मैं भी खाऊँगा। तुम पहाड़ पर पहिले थे, इसलिए पहिली बारी अब मुझे दो।"

धोखेबाज़ करछियाँ गिन-गिनकर, बासा भात खाने लगा। जब हँडे का एक तिहाई खा गया "अब तेरी बारी है," कहकर उसने हँडी और करछी मूर्ख को दे दी। मूर्ख भी करछी गिनता जितनी करछियाँ उसके दोस्त ने खायी थीं, उतनी ही उसने भी खायीं। फिर उसने हँड़ी धोखेबाज़ को दी। इस बार उसने करछियाँ गिन-गिनकर तो खायीं, पर जब मूर्ख की बारी आयी, तो हँड़ी में कुछ न रह गया था। मूर्ख यह भी न जान सका कि उसको कैसे धोखा दिया गया था।

फिर पत्थर तोड़ने का समय आया।

"एक ही हथौड़ा है। इसलिए एक के बाद एक को पत्थर तोड़ने होंगे। चूँकि पिछली बार तुम्हारी बारी थी। तुम थोड़े
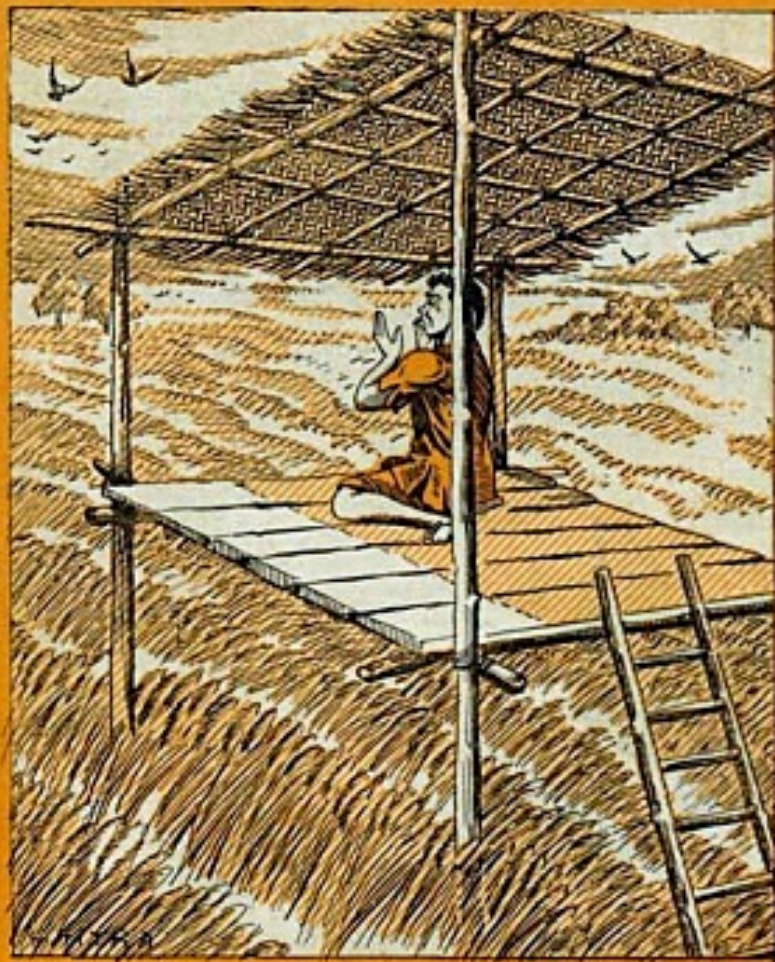
पत्थर तोड़ो, उसके बाद मैं तोड़ूँगा। मेरे बाद तुम, तुम्हारे बाद मैं....जब तक पत्थर खतम नहीं हो जायेंगे, तब तक हम इस तरह करते रहेंगे।" धोखेबाज़ ने कहा।

"सचमुच तुम कितने न्यायशील हो।" मूर्ख यों धोखेबाज़ की तारीफ़ करता, पत्थर तोड़ने बैठ गया। जब तिहाई पत्थर खतम हो गये, तो धोखेबाज़ ने भी हथौड़ा लेकर पत्थर तोड़े। उसने भी एक तिहाई पत्थर तोड़े। फिर मूर्ख का नम्बर आया। जब फिर धोखेबाज़ की बारी आयी, तो सब पत्थर खतम हो गये।

फिर वे वहाँ से चले। कुछ दूर जाने के बाद एक खेत में, एक किसान दिखाई दिया। उसने उनको देखकर कहा—"अगर तुम रात-भर यहाँ चिड़ियाओं को भगाते रहे, तो तुम्हें खाना दूँगा और रात सोने के लिए जगह भी दूँगा।"

"मैं खेत के बाहर खड़े-खड़े दूर से ही चिड़ियाओं को भगा दूँगा। तुम खेत में रहो और जो चिड़ियायें मुझसे बचकर निकल जायें, उन्हें भगा देना।" धोखेबाज़ ने कहा। मूर्ख इसके लिए मान गया। धोखेबाज़ खेत के परली तरफ़ गया और मेंढ़ की झाड़ी की छाया में आराम से सो गया। शाम तक मूर्ख चिल्लाता-चिल्लाता, चिड़ियों को भगाता थक गया।

जब रात को वे भोजन कर रहे थे, तो मूर्ख ने धोखेबाज़ से कहा—"बाप रे बाप, यह काम बड़ा कठिन है। किसान से कहेंगे कि वह हमें भेड़ें चराने दे। यह आसान काम है। दिन-भर पहाड़ पर सो सकते हैं। पक्षी तो भेड़ों को उठा कर ले नहीं जायेंगे। न ताली पीटने की ही ज़रूरत है।"

धोखेबाज़ ने इस सुझाव का सन्तोषपूर्वक समर्थन किया। अगले दिन दोनों पेड़ों के साथ पहाड़ी पर गये। भेड़ें चरने लगीं। भेड़ों को देखनेवाला कुत्ता भी एक जगह था। दोनों पैर फैलाकर सो गये।

जब शाम वे उठे, तो कहीं कोई भेड़ न थी। उनको देखने शायद कुत्ता भी चला गया था।

"तुम भेड़ों को उधर हाँको और मैं इधर से हाँकता हूँ और कोई रास्ता नहीं है। दोनों फिर यहीं मिलेंगे।" धोखेबाज़ ने कहा।

दोनों दो तरफ़ गये। धोखेबाज़ जाने को तो थोड़ी दूर गया, फिर वहीं वापिस आकर खड़ा गया। थोड़ी देर में भेड़ों को कुत्ता हाँक लाया था। फिर मूर्ख ने आते ही पूछा—"कहाँ चले गये थे तुम, सब भेड़ों को मैं ही हाँक कर लाया हूँ।"

उस दिन रात को मूर्ख ने अपने मित्र से कहा—"मुझे यह काम भी कठिन मालूम पड़ रहा है, क्या इससे आसान कोई काम नहीं है?"

"भीख माँग सकते हो? इससे आसान कोई काम नहीं है। चलना और बकना और कोई काम नहीं। जब तुम चाहो, तभी चलो, कोई पूछनेवाला नहीं और जो एक जगह गाओ, या बको, वह सभी जगह बक सकते हो। तुम घरों के सामने भीख माँगना और मैं घरों के पीछे।" धोखेबाज़ ने कहा।

मूर्ख ने हाँ कहा। चूँकि वह बहुत दुबला था, इसलिए लोगों ने उसे भीख भी दी। इस बीच धोखेबाज़ घरों के पीछे गया और मुरगी या बत्तख, जो कुछ उसे मिला, वह चुरा लाया।

जब दोनों मिले, तो उसने मूर्ख से कहा—"देखो, तुम ये दमड़ियाँ लाये हो, ये देखो, मैं क्या लाया हूँ।"

जब इस प्रकार दो-तीन जगह हुआ, तो धोखेबाज़ ने अपनी कमाई में से, मूर्ख को हिस्सा देने से इनकार कर दिया। "तुम्हें भीख माँगना भी नहीं आता है। बस, हमेशा मुझे ही तुम्हारे लिए काम करना पड़ता है।"

मूर्ख चिन्तित हो उठा। अच्छा, तो खैर, अब से तुम घर के आगे माँगो, मैं पिछवाड़े में माँगूँगा।" धोखेबाज़ इसके लिए मान गया। ऐसा करने पर मूर्ख की भीख से अधिक धोखेबाज़ का चोरी का माल ही रहता।

एक बार वे एक ऐसे घर में गये, जो खेतों में था। मूर्ख ने घर के सामने खड़े होकर भीख माँगी। इस बीच धोखेबाज घर के पीछे गया और एक बत्तख और कुछ मूँगफलियाँ चुरा लाया।

मूर्ख को खाली हाथ देख, धोखबाज ने कहा—"मैं इस बत्तख में तुम्हें कुछ भी हिस्सा न दूँगा। तुम बिलकुल आलसी हो। माँग भी नहीं सकते हो। जाओ, तुम अपना पेट खुद भरो।" कहकर वह एक जगह बैठकर मूँगफलियाँ छीलकर खाने लगा।

इस बीच धोखेबाज की चोरी के बारे में घरवालों को मालूम हो गया। उन्होंने खेतों में काम करनेवाले पाँच दस आदमियों को बुलाया। वे भागे भागे आये। धोखेबाज को उन्होंने रंगे हाथ पकड़ा। सब ने मिलकर उसे खूब पीटा। वे उसे न्यायाधिकारी के पास ले गये। न्यायाधिकारी ने उसको जेल की सज़ा दी।

जाम्बवन्त के प्रोत्साहन देने पर, हनुमान ने राम की अंगूठी लेकर, लंका जाकर, यह जानने का निश्चय किया कि रावण ने कहाँ सीता को छुपा रखा था। वह शरीर को बढ़ाकर, महेन्द्रगिरि पर बड़े बड़े वृक्षों को तोड़ता, पत्थरों को रौंदता, इधर-उधर थोड़ी देर घूमा। जाने से पहिले उसने सूर्य, इन्द्र और वायु देवता को नमस्कार किया। फिर महेन्द्र पर्वत हाथ पैर रखकर, यकायक उछला। उसके उछलने से महेन्द्रगिरि काँप-सी उठी। उसके पत्थर टुकड़े-टुकड़े हो गये। गुहाओं में रहनेवाली प्राणी आर्तनाद करने लगे। पर्वतों में रहनेवाले विद्याधर आकाश में उड़ने लगे।

हनुमान को समुद्र पार करके जाता देख, ऋषि, चारण, सिद्ध आपस में बातें करने लगे।

हनुमान ऊपर उछलकर, ज़ोर से चिल्लाया। एक क्षण आकाश में देखकर फिर पास खड़े जाम्बवन्त आदि से कहा—"मैं राम के बाण की तरह तेज़ी से लंका जाऊँगा। अगर वहाँ सीता न दिखाई दी तो उसी तेज़ी से स्वर्ग चला जाऊँगा। अगर वहाँ भी सीता न मिली, तो वापिस लंका चला जाऊँगा। उस रावण को मारकर

यहाँ आऊँगा। भाग्य ने साथ दिया, तो सीता को ले आऊँगा। नहीं, तो रावण के साथ लंका को उठा लाऊँगा।"

यह कहकर हनुमान आकाश में उड़ गया। हनुमान के वेग के कारण बड़े-बड़े पेड़ उसके पीछे उखड़ गये। कुछ दूर जाकर समुद्र में जा गिरे। उन पेड़ों ने भी उसी तरह हनुमान को पहुँचाया, जिस प्रकार दूर यात्रा पर बन्धु पहुँचाने आते हैं। पेड़ों के गिर जाने के बाद, उनके फूल कुछ दूर तक हनुमान के साथ गये।

जब दक्षिण की ओर हनुमान यों जा रहा था, तो उसके हाथों में से निकलने वाली हवा ज़ोर से शोर करने लगी। वह धूमकेतु की तरह लंका की ओर जा रहा था। उसकी गति के कारण, उसके नीचे समुद्र में बड़ी-बड़ी तरंगे उठने लगीं, तूफ़ान आने लगा। उसकी छाया समुद्र में दस योजन चौड़ी और तीस योजन लम्बी दिखाई देने लगी।

इस प्रकार हनुमान को समुद्र के ऊपर से जाता देख, देवता खुश हुए। समुद्र ने भी हनुमान की सहायता करनी चाही। चूँ कि समुद्र की वृद्धि करनेवाला, सगर ईक्ष्वाकू वंश का था। उसी वंश के राम के काम के लिए हनुमान जा रहा था। ईक्ष्वाकू वंश के प्रति अपनी कृतज्ञता दिखाने का समुद्र के लिए यह अच्छा मौका था।

इसलिए समुद्र ने अपने में छुपे हुए मैनाक पर्वत से कहा—"तुम्हें पाताल में से राक्षसों को न आने के लिए रख रखा था—अब तुम्हें एक छोटा काम बताता हूँ, सुनो। वानर श्रेष्ठ हनुमान राम के काम पर, अत्यन्त साहस के साथ उड़ता इस तरफ़ आ रहा है। चूँकि तुम ऊपर और

अगल बगल में बढ़ सकते हो इसलिए तुम ऊपर की ओर बढ़ो ताकि हनुमान को कुछ विश्रान्ति मिल सके। तुम्हारे ऊपर कुछ देर विश्रान्ति करने के बाद हनुमान बाकी रास्ता आसानी से तय कर सकेगा। तुम्हें यह अवश्य करना होगा।"

इस प्रकार सोने का शिखरवाला मैनाक पर्वत समुद्र की इच्छानुसार आकाश की ओर बढ़ा। उसके सोने के शिखर सौ सूर्यों की तरह चमकने लगे।

यकायक रास्ते में मैनाक को बढ़ता देख हनुमान ने कहा—"यह मेरे काम में बाधा डालना चाहता है।" उसने अपनी छाती से पर्वत को एक तरफ़ जोर से धकेल दिया।

उस हनुमान को, जिसने इतनी आसानी से उसको एक तरफ़ धकेल दिया था, देख मैनाक बड़ा सन्तुष्ट हुआ। उसने मानव रूप धारण करके एक शिखर पर खड़े होकर कहा—"वानर वीर, तुमने दुर्लंघ्य समुद्र को पार करते हुए भी, थके हुए होने पर भी, मुझे गिरा दिया। मेरे शिखर पर थोड़ी देर विश्राम करो। कभी राम के पूर्वजों और सगर के लड़कों ने समुद्र का बड़ा उपकार किया था। तुम राम के काम पर जा रहे हो, इसलिए समुद्र कुछ प्रत्युपकार करके, अपनी कृतज्ञता जताना चाहता है। समुद्र ने तुम्हें विश्राम देने के लिए कहा है। तुम मुझ पर खड़े हो जाओ। कन्द-मूल खाकर चले जाना। कोई भी अतिथि पूजनीय है। फिर तुम्हारे बारे में, तो कहना ही क्या? तुम बड़े पंडित हो, यही नहीं, वायुदेव के पुत्र हो। मैं वायुदेव का ऋणी हूँ। कृत युग में पर्वतों के पंख हुआ करते थे। वे तेज़ी से हवा में उड़ा करते थे। इसलिए देवता

और ऋषि भी उनको देखकर डरा करते थे। तब देवेन्द्र ने पंखों को हज़ारों की संख्या में काट दिये। जब देवेन्द्र ने मेरे पंख काटने चाहे, तो तुम्हारे पिता वायुदेव मुझे बड़ी तेज़ी से उसकी पहुँच से दूर ले गये। उनकी कृपा से मेरे पंख अब भी सुरक्षित हैं। इसलिए तुम न न करो, मेरे और समुद्र के आतिथ्य को स्वीकार करो। मान भी जाओ।"

हनुमान ने कहा—"मुझे बड़ा सन्तोष है। तुम्हारी बातें ही मेरे लिये तुम्हारा आतिथ्य है। तुम्हारा आतिथ्य अस्वीकार कर दिया है, इसलिए मुझ पर गुस्सा न करना। मैं काम पर जा रहा हूँ, इसलिए विश्राम लेना सम्भव नहीं है। मैंने वानरों को वचन दिया है कि मैं राम बाण की तरह लंका जाऊँगा।"

हनुमान ने मैनाक को अपने हाथ से छुआ और प्रफुल्ल वदन हो आगे की ओर बढ़ा।

"तुम अपने कार्य में सफल होवो।" समुद्र और मैनाक ने उसको आशीर्वाद दिया।

हनुमान वहाँ से आकाश में और ज़ोर से ऊँचे उड़ा।

मैनाक के आतिथ्य को इनकार करके, जब हनुमान लंका की ओर जा रहा था, तो देवताओं ने उसकी परीक्षा लेनी चाही। वे साँपों की माँ सुरस के पास गये। "वायुपुत्र हनुमान समुद्र पर से उड़ता लंका की ओर जा रहा है। तुम भयंकर आकार बनाकर उसका रास्ता रोको। हम यह देखना चाहते हैं कि वह तुम्हें जीतता है या तुम से डर जाता है। हम जानना चाहते हैं कि उसका पराक्रम कितना है।"

सुरस ने उनकी इच्छा को पूरी करने के लिए पहाड़ से राक्षस का रूप धारण किया। बड़े-बड़े दान्त लगा कर, भयंकर रंग लगा कर, हनुमान के रास्ते में खड़ी हो गई।

"हनुमान, तुम्हें खाने के लिए देवताओं ने मुझे आज्ञा दी है। इसलिए तुम मेरे मुख में प्रवेश करो।" उसने कहा।

हनुमान ने सुरस को नमस्कार करके हँसते हुए कहा—"राम जब वनवास में थे, उनकी अनुपस्थिति में रावण उनकी पत्नी को उड़ा ले गया। मैं अब राम के दूत के तौर पर लंका जा रहा हूँ। इसलिए तुम भी राम के काम के लिए मदद करो। नहीं कहती हो, तो राम के पास जाकर, उनकी अनुमति पाकर, तुम्हारे मुख में प्रवेश करूँगा। मुझे इस पर कोई आपत्ति नहीं है।"

सुरस ने इसका जवाब न देकर कहा—"मुझे कोई भी लाँघकर नहीं जा सकता। मुझे इसका वर मिला हुआ है। जो मेरे मुख के सामने आता है, वह मुझ से बचकर नहीं जा सकता। यह वर मुझे ब्रह्मा ने ही दे रखा है। इसलिए मेरे मुख में प्रवेश करो।" वह मुख खोलकर हनुमान के सामने खड़ी हो गई।

इस पर हनुमान ने रूठकर कहा—"तो इतना बड़ा मुख करो कि मैं आसानी से अन्दर चला जाऊँ।" उसने अपने शरीर को दस योजन बड़ा दिया। तुरत सुरस ने अपने मुख को बीस योजन बड़ा कर दिया। हनुमान ने क्रुद्ध हो, अपने शरीर को तीस योजन बड़ा कर दिया। सुरस ने अपना मुख चालीस योजन बड़ा

कर दिया। हनुमान ने अपने शरीर को पचास योजन बढ़ा दिया।

इस तरह होड़ करते-करते हनुमान का शरीर नब्बे योजन और सुरस का मुख सौ योजन बढ़ गया।

यकायक हनुमान ने अपना शरीर सूक्ष्म कर लिया। मक्खी की तरह वह सुरस के मुख में घुस गया और बाहर भी आ गया। उसने कहा—"माँ सुरस, ब्रह्मा का दिया हुआ वर सार्थक हो गया। मैं तेरे मुख के सामने आया था, इसलिए मैंने तेरे मुख में प्रवेश किया, अब मुझे छोड़ दो। सीता के पास जाना है।"

सुरस ने राक्षस का रूप छोड़ दिया। मामूली रूप में आकर कहा—"जाओ, तुम्हें विजय मिलेगी। राम और सीता को फिर से मिलाओ।"

हनुमान ने फिर अपनी यात्रा शुरु की। आकाश में उड़ते हुए हनुमान को सिंहक नामक राक्षस जन्तु ने देखा, वह भूखा था। हनुमान को खाने के लिए उसने उसकी छाया खींची। हनुमान को यह देख आश्चर्य हुआ कि कोई उसे जोर से पीछे खींच रहा था। जब उसने दोनों तरफ़ देखा, तो उसको समुद्र में सिंहक दिखाई दिया। जब उसने उसकी छाया को घसीटते हुए देखा, तो उसको सुग्रीव की कभी कही हुई बात याद हो आयी। उसने कहा था कि दक्षिण समुद्र में एक विचित्र जन्तु है। वह छाया को पकड़ सकता है। हनुमान ने सोचा कि शायद यह ही वह जन्तु होगा।

सिंहक की शक्ति के सामने हनुमान का पराक्रम किसी काम न आया। उसने उसको अपनी ओर खींच लिया। हनुमान ने अपने शरीर को बड़ा कर दिया। सिंहक ने भी

उनके अनुसार अपना मुख बड़ा किया। जब उसने यों मुख खोला, तो हनुमान ने उसके मुख के मर्म स्थलों को देख लिया। फिर उसने अपना शरीर छोटा कर लिया। उसके मुख के अन्दर गया। उसके मर्म स्थलों को नष्ट कर दिया, उसके मुख बन्द करने से पहिले ही वह बाहर निकल आया और फिर उसने अपने को बड़ा कर लिया। सिंहक का हृदय फट गया। वह बेहोश होकर पानी पर तैरने लगा।

मरे सिंहक को और मारनेवाले हनुमान को देखकर आकाश में विचरनेवाले भूत बड़े सन्तुष्ट हुए, उन्होंने हनुमान की प्रशंसा की।

हनुमान फिर निकल पड़ा। थोड़ी देर में उसको उधर का समुद्र का किनारा दिखाई दिया। वहाँ जंगल थे। चलते चलते उसको लंका द्वीप और वहाँ के वन-वृक्ष आदि दिखाई देने लगे। नदियों का समुद्र में गिरना उसने देखा।

हनुमान को झट याद आया कि अभी उसका शरीर बड़ा ही था। लंका के राक्षसों ने यदि उतने बड़े शरीरवाले को देखा तो वे हाहाकार करेंगे और सबको बतायेंगे और वह काम, जिस पर वह आया था, बिगड़ जायेगा। इसलिए हनुमान ने अपने शरीर को छोटा कर लिया।

उस शरीर के साथ वह अलम्ब पर्वत पर उतरा। उसकी कई चोटियाँ थीं। उस पर नारियल आदि के बड़े-बड़े पेड़ थे। दूर ऊँचाई पर, त्रिकूट पर्वत पर उसको लंका नगरी दिखाई दी। वह देवेन्द्र की अमरावती की तरह थी।

२४. अबू सिम्बेल

मिश्र के दक्षिणी सिरे के अबू सिम्बेल (दो) मन्दिर, प्राचीन मिश्र की शिल्प कला के सुन्दर उदाहरण हैं। पहाड़ में बनाये गये द्वारों की मूर्तियाँ रामिसेस द्वितीय की हैं। उनकी ऊँचाई ६५ फीट है। ३,२०० वर्ष पहिले रामिसेस ने इन मन्दिरों को बनवाया था। रामिसेस द्वितीय १३१८ ई. पू. में पैदा हुआ और १२३२ ई. पू. में ८६ वर्ष की उम्र में मर गया।
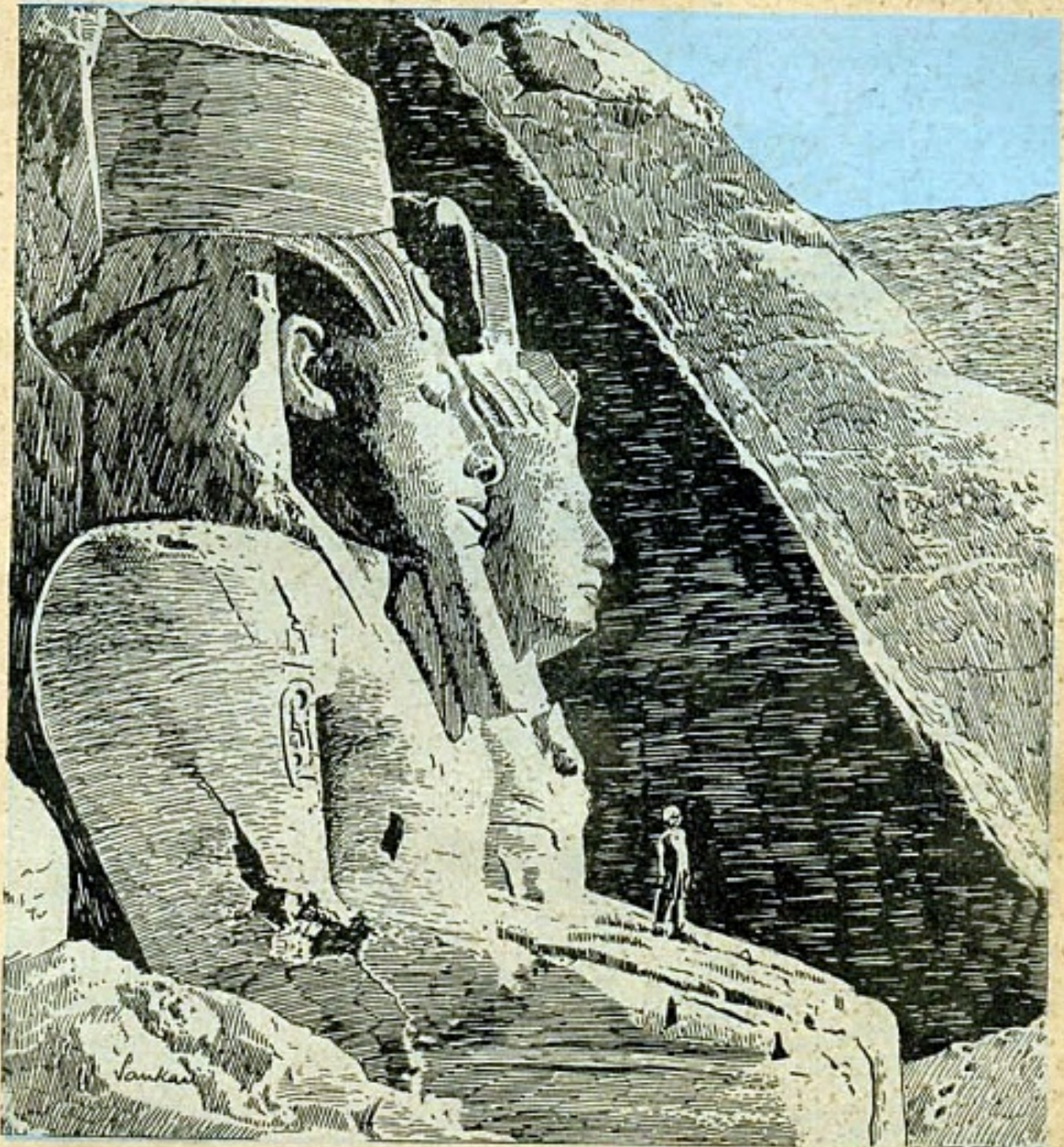
१. अशोककुमार, कानपूर

क्या "चन्दामामा" विदेशों में भी बिकता है?

हाँ, जहाँ जहाँ हिन्दुस्तानी हैं, वहाँ वहाँ "चन्दामामा" भी जाता है।

२. गोपाल प्रसाद शर्मा, शिकोहाबाद

क्या हमें काँसे का किला नामक उपन्यास मिल सकेगा?

अभी यह पुस्तकाकार में छपा ही नहीं है।

३. रामजीलाल, हाथरस

आप "चन्दामामा" में फिल्म सम्बन्धी सामग्री क्यों नहीं छापते?

चूँकि "चन्दामामा" फिल्मी पत्रिका नहीं है।

४. सुदर्शन कुमार बजाज, अल्मोड़ा

क्या आपके यहाँ से कोई ऐसी किताब मिल सकती है, जिस में रामायण शुरू से अन्त तक छपी हो।

जी नहीं।

५. लक्ष्मणदास आहुजा, तुमसर

"चन्दामामा" सबसे पहिले किस भाषा में प्रकाशित हुआ था?

तेलुगु में।

६. सूर्यदेव पासवान, बेटिया

आपके यहाँ कौन से उपन्यास पुस्तकाकार में छप चुके हैं ?

एक ही, "विचित्र जुड़वा"

७. अनुपम चतुर्वेदी, लखनऊ

विचित्र जुड़वा का मूल्य और पता क्या है।

"विचित्र जुड़वा" का मूल्य १ रुपया है, तथा डाक खर्च आठ आना अलग। मेनेजर चन्दामामा पब्लिकेशन्स के नाम आर्डर भेजना चाहिए।

८. उषा, धनबाद

क्या "विचित्र जुड़वा" सचित्र है ?

हाँ।

९. सूर्यनारायण, मुजफ़्फ़रपुर

"चन्दामामा" में आप कब हरक्यूलिस की कहानियाँ छापनेवाले हैं ?

कभी तो छापेंगे ही।

१०. एस. नागराजन, वाराणासी

आप अच्छे प्रश्न को पुरस्कार क्यों नहीं देते हैं ?

क्योंकि इस स्तम्भ की व्यापकता सीमित है।

११. पृथ्वीराम, दिल्ली

समाचार पत्रों में पढ़ा था कि चन्दामामा ने पुस्तक प्रकाशन भी शुरू कर दिया है। आपके यहाँ से क्या पुस्तक हाल में छपी है ?

"मेरे देखे कुछ देशों की झलक" लेखक हैं श्री सी. सुब्रह्मण्यम्।

Photo by R. N. A. Balakrishnan

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

असली कला भगवान की !

प्रेषक :
कमलाकर सुर्जीकर - नागपुर

Photo by R. N. A. Balakrishnan
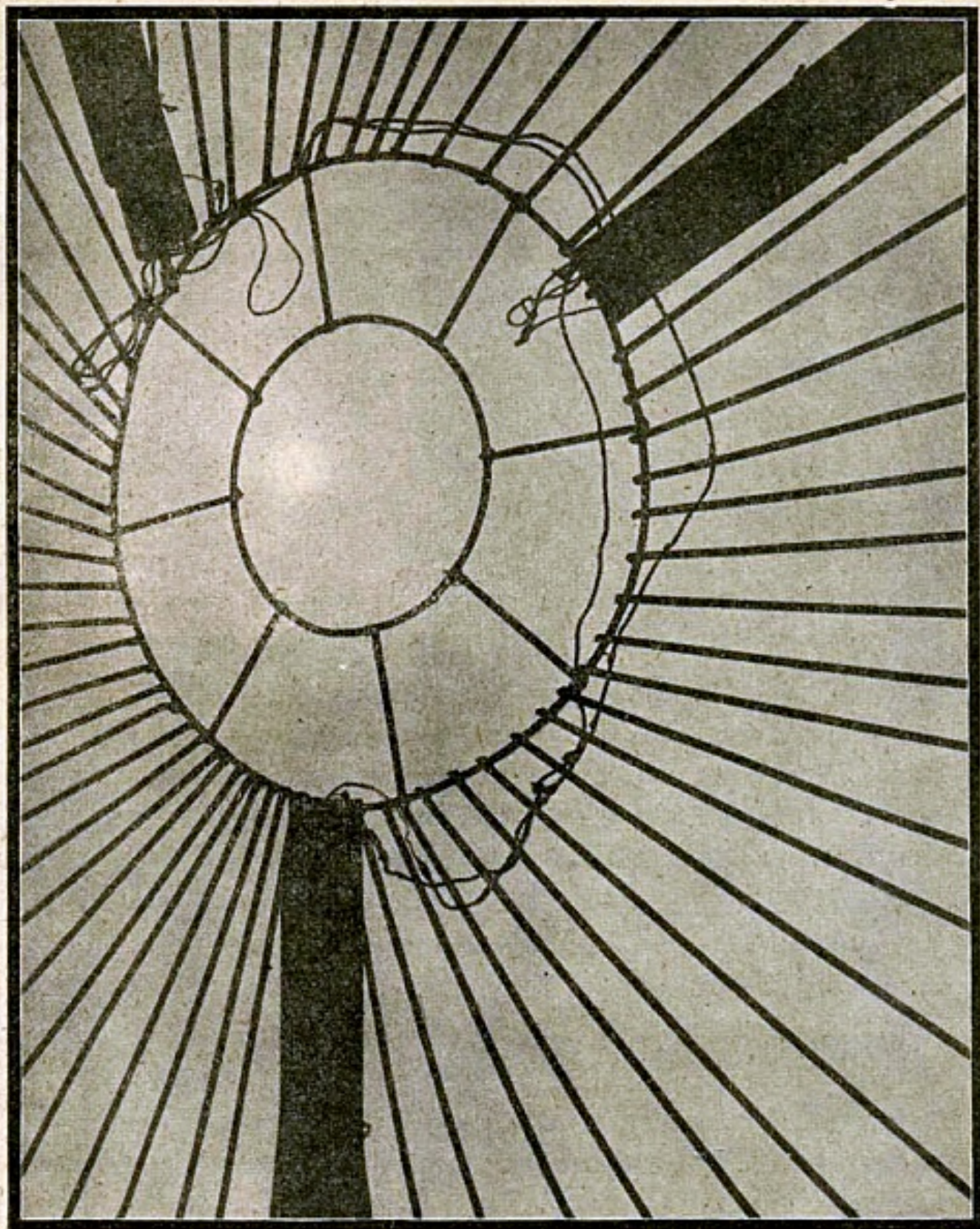
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

नकली कला इन्सान की!!

प्रेषक:
कमलाकर सुर्जीकर-नागपूर

आकाश का फोटो

अमेरिका के पालोमार पर्वत पर संसार का सब से बड़ा "२०० अंगुल" वाला हेल टेलिस्कोप है। उसकी सहायता से १०० करोड़ कान्ति-संवत्सर के नक्षत्र समूह को देखा जा सकता है। पालोमार पर्वत पर ही ४८ अंगुलवाला टेलिस्कोप स्मिथ केमरा भी है। १७५८ में उस केमरे से आकाश के तीन चौथाई भाग का फोटो लिया गया था। इनको लेने में सात वर्ष लग गये। ६०० कान्ति संवत्सर दूर, यानि तीन करोड़ ६० लाख करोड़ करोड़ मील दूरी का प्रत्येक नक्षत्र इस फोटो में है। ऐसे नक्षत्र, जो साधारण आँख को कम कान्ति के दिखायी देते हैं, उनसे भी कम कान्तिवाले नक्षत्रों के फोटो इसमें हैं।

जब २०० अंगुलवाला, दूर देखनेवाला टेलिस्कोप है, तो आकाश के फोटो लेने के लिए स्मिथ केमरा टेलिस्कोप का क्यों उपयोग किया गया? इसका कारण है। हेल टेलिस्कोप से दूर तक तो देखा जा सकता है, पर बहुत कम भाग ही। यदि उससे फोटो लिये जाते तो सात साल की अपेक्षा १०,००० सालों में काम खतम होता।

प्रारम्भिक योजना के अनुसार यह काम चार साल में खतम हो जाना चाहिए था। पर बहुत-सी बाधायें आयीं। फोटो लेनेवालों ने कहा कि हर फोटो बिल्कुल स्पष्ट और साफ़ होना चाहिए। लिये हुए फोटुओं में से उन्होंने ४५ प्रतिशत फोटो निकाल दिये।

आकाश के फोटो लेने की योजना नक्षत्र शास्त्रज्ञ डा. बोवेन ने बनाई थी। उनके पर्यवेक्षण में ही फोटो लिये गये। डा. अल्बर्ट विल्सन, राबर्ट हेरिंग्टन, ज्यार्ज एबेल आदि ने स्वयं फोटो लिये। इस प्रयत्न में अमेरिका के नेशनल ज्योग्राफिक सोसाईटी वालों ने उनकी मदद की। ईस्टमेन कोडाक कम्पनीवालों ने फोटो लेने के लिए आवश्यक प्लेट तैय्यार करके दिये।

इन फोटुओं का उपयोग क्या है? एक उपयोग नहीं, कई उपयोग हैं। उनमें से एक दो का हम यहाँ उल्लेख करेंगे।

देखते देखते एक साधारण नक्षत्र फूट पड़ता है। उसका प्रकाश इससे पूर्व की कान्ति से कई करोड़ गुना बढ़ जाता है। इनको "नव तारे" कहा जाता है। उस तरह के तारों की विस्फोटक शक्ति, हाइड्रोजन बाम्ब की शक्ति से करोड़ करोड़ करोड़ गुना हो सकती है। उदाहरण के लिए १९५२ में स्मिथ केमरा से "एन. जी. ५६६८" संकेतवाले नक्षत्र समूह का फोटो लिया गया। १९५४ में हेल टेलिस्कोप से उसी "नये तारे" का फोटोग्राफ़ लिया गया। इस तरह भविष्य में नये तारों का बनने का अनुमान करके परिशोधक चूँकि

उनकी पहिली कान्ति से परिचित हैं, इसलिए उनको 'विस्फोटन' के कारण पता लगाने के काफ़ी आधार मिल जाते हैं। आकाश के फोटो उनकी इस दिशा में मदद करते हैं।

१७५८ से बीसवीं सदी के मध्य काल तक आकाश की क्या स्थिति थी, इसका पूरा रिकार्ड सुरक्षित है। भविष्य में नक्षत्रों के आयतन व स्थिति में जो कुछ परिवर्तन होंगे, उनका इन फोटुओं द्वारा अध्ययन किया जा सकता है। ये फोटो, नक्षत्र वेत्ताओं के लिए सौ वर्ष तक काम दिलाते ही रहेंगे। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है, चूँकि करोड़ नक्षत्र, नक्षत्र समूह "तेज मेघ" का पहिली पहिली बार ही फोटो लिया गया है।

बाण के निशानवाला "नया तारा" १९५४ में बना था।

आकाश में कई नक्षत्र एक जगह एकत्रित हो जाते हैं, फिर यूँ इनके समूह बनते हैं। आकाश में ऐसे समूह भरे पड़े हैं। ये किस सूत्र के अनुसार पैदा होते हैं, कोई नहीं कह सकता। यह रहस्य जानने में ये फोटो मार्गदर्शन कर सकते हैं।

रेडियो एस्ट्रोनोमी के लिए भी ये फोटो मदद कर सकते हैं। रेडियो टेलिस्कोपों में ऐसी ध्वनि भी आती है, जो भूमि तक भी नहीं पहुँती। ये ध्वनियाँ जिस प्रान्त से आती हैं वे अदृश्य है। परन्तु कभी कभी उनको देखा जा सकता है और उनका फोटो लिया जा सकता है।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

फरवरी १९६४ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ दिसम्बर १९६३ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

दिसम्बर – प्रतियोगिता – फल

दिसम्बर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : **असली कला भगवान की !**

दूसरा फ़ोटो : **नकली कला इन्सान की !!**

प्रेषक : **कमलाकर सुर्जीकर,**
आबदेव गली, स. न. ७, महाल, नागपुर - २.

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'